जनवरी
2025

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 89 अंक - 1 । प्रति - ₹ 25 । ₹ 300 वार्षिक

10 ▶ अचूक ब्रह्मास्त्र है गायत्री—उपासना

20 ▶ साधनों से नहीं, साधना से मिलता है शाश्वत सुख

32 ▶ अनसुनी न करें अंतःकरण की आवाज

46 ▶ लक्ष्य निर्धारण का महत्त्व

हमारी अतृप्ति और असंतोष का कारण।

इच्छा और आवश्यकता में यथेष्ट अंतर है, यद्यपि अनेक व्यक्ति एक ही अर्थ में इनका प्रयोग करते हैं। इच्छा का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। हम नाना प्रकार की वस्तुएँ देखते हैं और लुभाकर उनकी इच्छा करने लगते हैं। ऐसी ही एक इच्छा हमारी आवश्यकता भी है। आवश्यकता केवल ऐसी इच्छा है; जिसके बिना हम रह नहीं सकते; जिसके लिए हमारे पास पर्याप्त साधन हैं और जिसे प्राप्त करने से हमारी तृप्ति हो सकती है। कुछ आवश्यकताएँ रुपये-पैसे से और कुछ उसके बिना भी पूर्ण हो सकती हैं। अनेक बार रुपये-पैसे की कमी श्रम द्वारा पूर्ण हो जाती है।

आवश्यकता और उद्योग का घनिष्ठ संबंध है। आप जितना ही अपनी आवश्यकताएँ बढ़ाएँगे, उतना ही उद्योग, परिश्रम और कष्ट आपको रहेगा। प्रत्येक आवश्यकता अपने साथ उद्योग की कुछ मात्रा चाहती है। यदि आपकी आवश्यकताएँ थोड़ी हैं, तो आप आसानी से, थोड़े ही रुपये और श्रम से संतुष्ट और तृप्त हो सकते हैं। आधुनिक काल में फैशनपरस्त तथा असंयमी व्यक्तियों ने अपनी आवश्यकताओं में वृद्धि की है। फलतः उनका जीवन संकट में है।

जनवरी – 1950 (पृष्ठ 8)

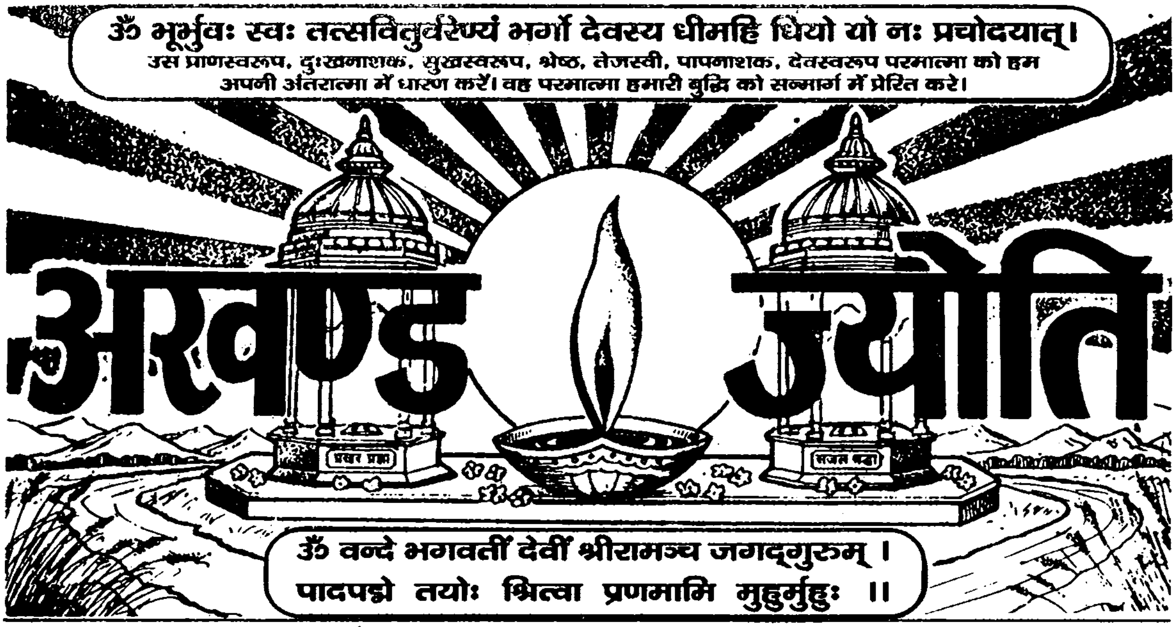

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291
7534812036
7534812037
7534812038
7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	89
अंक	:	01
जनवरी	:	2025
पौष-माघ	:	2081
प्रकाशन तिथि	:	01.12.2024
वार्षिक चंदा		
भारत में	:	300/-
विदेश में	:	2800/-
आजीवन (बीसवर्षीय)		
भारत में	:	6000/-

राजनीतिक स्वतंत्रता से सांस्कृतिक स्वतंत्रता की ओर

राजनीतिक स्वतंत्रता से सांस्कृतिक स्वतंत्रता की ओर यात्रा अभी बाकी थी। स्वराज्य का स्वप्न अभी अधूरा था। 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, इसे हम लेकर रहेंगे' का जागरण मंत्र देने वाले लोकमान्य तिलक ने क्या इसी स्वराज्य की कामना की थी, जो हमें अँगरेजों से मिला? पूर्ण स्वराज्य के लिए संघर्ष करने वाले महात्मा गांधी ने क्या इसी की माँग की थी, जो हमें 15 अगस्त, 1947 को मिला? प्रश्न अनेकों थे, पर उत्तर नदारद थे।

युगऋषि ने स्वयं साबरमती आश्रम में महात्मा गांधी का सान्निध्य पाया था। उन्होंने स्वयं गांधी के सत्याग्रही की भूमिका निभाई थी। 'राम' नाम का जप करते हुए राम के ध्यान में लीन, 'रामराज्य' की कामना करने वाले राष्ट्रपिता गांधी जी को उन्होंने समीप से देखा था। उत्तर प्रदेश के लगान आंदोलन के समय उन्होंने पं. गोविंद वल्लभ पंत एवं बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को नजदीक से जाना था। स्वाधीनता आंदोलन के कारावास में कठिन कैदियों को दी जाने वाली कालकोठरी की सजा में उन्होंने केवल भारतमाता के दिव्य व दैवी रूप का ध्यान किया था।

राजनीतिक स्वतंत्रता मिल जाने पर उन्होंने अनेकों सत्याग्रहियों को सत्यपथ से भटकते देखा। सत्ता की डगर पकड़ते देखा। सत्ता के लुभावने लोभ उनके सामने भी आए। उनके ही निकट के मित्र 'जगन प्रसाद रावत' उत्तर प्रदेश सरकार में मंत्री भी हुए; पर उन्होंने प्रसन्नता औरों के लिए छोड़ी, पीड़ा को स्वयं के लिए चुना। अब राष्ट्र की सांस्कृतिक स्वतंत्रता उनका लक्ष्य बनी। वेदमाता की साधना से भारतमाता की सेवा यही उनका पथ बना। उन्होंने प्रण लिया कि भारत की सनातन संस्कृति को देश के घर-घर में, दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाएँगे। इसके लिए अपने साथ, अपने असंख्य लीला-सहचरों को लेकर भारतीय संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने के लिए चल पड़े। ❒

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

विषय सूची

❁ आवरण—1 1
❁ आवरण—2 2
❁ राजनीतिक स्वतंत्रता से सांस्कृतिक स्वतंत्रता की ओर 3
❁ **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
भारतीय मूल्यों की सार्वभौमिकता 5
❁ हमारा लक्ष्य : पूर्णता 8
❁ अचूक ब्रह्मास्त्र है गायत्री-उपासना 10
❁ आत्मसमर्पण है प्रेम 14
❁ भाग्य को लिखने की कलम है कर्म 15
❁ **पर्व विशेष—गणतंत्र दिवस**
राष्ट्र की आराधना का पर्व 17
❁ साधनों से नहीं, साधना से मिलता है शाश्वत सुख 20
❁ अपनी सृजनात्मक क्षमता कुछ ऐसे बढ़ाएँ 23
❁ महत्त्वपूर्ण है वर्तमान 26
❁ पावन योजना है गृहस्थ धर्म 30
❁ अनसुनी न करें अंत:करण की आवाज 32
❁ नववर्ष की मंगलकामना 35
❁ शिक्षा का मूल उद्देश्य 39
❁ स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है तपलोक 41
❁ **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा—28**
संवेदना की मिसाल 43
❁ शेरों का रोचक संसार 44
❁ लक्ष्य निर्धारण का महत्त्व 46
❁ **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—189**
गंगाजल पर शोध 48
❁ **युगगीता—296**
वह जो अपने सत्य स्वरूप में स्थित है 52
❁ **विश्वविद्यालय परिसर से—235**
ज्योति कलश यात्राओं का प्रणेता बना विश्वविद्यालय 54
❁ **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
ज्ञान की गंगा का अवतरण 58
❁ **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
वन-उपवन में जीवन का प्रकाश 65
❁ **अपनों से अपनी बात**
महाकाल की पुकार सुनें 68
❁ प्राण भरा संदेशों में (कविता) 70
❁ आवरण—3 71
❁ आवरण—4 72

आवरण पृष्ठ परिचय

साधक तीर्थ चेतना के समक्ष

जनवरी-फरवरी, 2025 के पर्व-त्योहार

शुक्रवार	10 जनवरी	पुत्रदा एकादशी	गुरुवार	30 जनवरी	शहीद दिवस
रविवार	12 जनवरी	विवेकानंद जयंती/ युवा दिवस	रविवार	02 फरवरी	वसंत पंचमी/ पूज्य गुरुदेव बोध दिवस
मंगलवार	14 जनवरी	मकर संक्रांति	मंगलवार	04 फरवरी	सूर्य सप्तमी
शुक्रवार	17 जनवरी	संकष्ट चतुर्थी	शनिवार	08 फरवरी	जया एकादशी
गुरुवार	23 जनवरी	नेताजी सुभाष जयंती	बुधवार	12 फरवरी	संत रविदास जयंती
शनिवार	25 जनवरी	षट्तिला एकादशी	सोमवार	24 फरवरी	विजया एकादशी
रविवार	26 जनवरी	गणतंत्र दिवस	बुधवार	26 फरवरी	महाशिवरात्रि

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे।** —*संपादक*

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

विशिष्ट सामयिक चिंतन

भारतीय मूल्यों की सार्वभौमिकता

भारत की एक मौलिक विशेषता इसकी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, ज्ञान-विज्ञान की परंपरा और जीवनमूल्यों की शाश्वत सार्वभौमिकता रही है, जिसे आज सॉफ्ट पावर के रूप में परिभाषित किया जाता है।

इसी शक्ति के बल पर भारत कभी विश्वगुरु पद पर विभूषित रहा और एक राष्ट्र के रूप में काल के अनगिनत थपेड़ों को खाते हुए भी अपनी सांस्कृतिक अंतर्धारा के साथ जीवंत एवं प्रवाहमान रहा तथा समय-समय पर अपने कालजयी ज्ञान-विज्ञान के विस्फोट के साथ विश्व को प्रकाश देता रहा और आज पुनः भारत इसी भूमिका की ओर तीव्रता से अग्रसर है।

वस्तुतः भारत अपनी बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक शक्ति के रूप में तब से सॉफ्ट पावर का प्रयोग कर रहा है, जब यह शब्द आविष्कृत भी नहीं हुआ था। हालाँकि बीते कुछ समय से एक रणनीति की तरह इसका व्यवस्थित प्रयोग किया जा रहा है, जिसके बल पर देश की विदेश नीति; भारत को विश्वपटल पर अहम भूमिका में प्रतिष्ठित कर रही है।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एवं प्रसिद्ध राजनीतिक विश्लेषक जोसेफ न्ये ने सॉफ्ट पावर शब्द का उपयोग सबसे पहले किया था। द्वितीय विश्वयुद्ध और उसके बाद के तमाम छोटे-बड़े युद्धों से राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति में क्रूर सैन्यशक्ति की निष्प्रभाविकता सिद्ध होती रही। अमेरिका का वियतनाम में तथा सोवियत संघ का अफगानिस्तान में किया गया अतिक्रमण इस विफलता के बड़े उदाहरण थे।

दोनों उस समय विश्व के सबसे शक्तिशाली देश थे, लेकिन दोनों उनसे बहुत कमजोर देशों को हराने में अक्षम रहे। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में जब सोवियत संघ का विघटन हुआ और संयुक्त राज्य अमेरिका का एक महाशक्ति के रूप में उभरना प्रारंभ हुआ तो वहाँ के राजनीतिक विश्लेषक जोसेफ न्ये अपनी पुस्तक—बाउंड टू लीड दि चेंजिंग नेचर ऑफ अमेरिकन पावर में इस अवधारणा के साथ सामने आए कि उनका देश सॉफ्ट पावर के साथ नई विश्वव्यवस्था (वर्ल्ड आर्डर) में प्रभावी रहेगा।

पुस्तक में शक्ति के तीन आयाम चिह्नित थे—सैन्यबल द्वारा शासन, आर्थिक प्रोत्साहन देकर प्रभावित करना और अंत में राष्ट्र की संस्कृति एवं मूल्यों का अमूर्त प्रभाव। परंपरागत रूप में सैन्य और आर्थिक शक्तियों को विश्व में राजनीति का प्रमुख कारक माना जाता रहा है। जिसमें सैन्यबल प्रयोग से लेकर आर्थिक प्रतिबंध आदि का उपयोग किया जाता है।

हार्ड पावर की इस आक्रामक प्रकृति के विपरीत जोसेफ न्ये ने शीतयुद्ध के बाद के विश्व में सॉफ्ट पावर की अवधारणा पर बल दिया, जिसके वे 3 स्तंभ मानते रहे—राजनीतिक मूल्य, संस्कृति और विदेश नीति। इसमें प्रतिपक्ष के दीर्घकालिक हितों एवं वरीयताओं पर ध्यान की बात कही गई। मालूम हो कि आजादी के दौर में गांधी जी के अहिंसक असहयोग के प्रयोग को स्वतंत्रता संग्राम में सॉफ्ट पावर का उदाहरण माना जाता है।

दूसरा 1960 के दशक में हिप्पी आंदोलन का दौर, जब पश्चिम के लोग योग, ध्यान, भारतीय शास्त्रीय संगीत और आध्यात्मिकता की ओर आकर्षित हुए। दोनों में तात्कालिक सरकारों की कोई अधिक भूमिका नहीं थी। यह बात दूसरी है कि आज सभी सरकारें अपने देशों से सॉफ्ट पावर का प्रसार करने की सुविधा प्रदान कर रही हैं। जिसमें कला, संस्कृति, संगीत, दर्शन, साहित्य, खेल और व्यंजन आदि शामिल हैं और भारत अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के साथ सॉफ्ट पावर का जखीरा रहा है।

वास्तव में विश्व का हर समझदार देश सॉफ्ट पावर के प्रति सजग है। सॉफ्ट पावर का अर्थ है— बिना किसी संघर्ष या शक्ति प्रयोग के किसी के व्यवहार में परिवर्तन करना। चीन की 'बेल्ट एंड रोड' पहल इसी का एक उदाहरण है, जिसमें विकास के नाम पर छोटे देशों को चीन पर निर्भर बनाना है, ताकि वे चीन की नीतियों का समर्थन करें।

भारत की सांस्कृतिक गतिविधियाँ, अध्यात्म तथा योग जैसी अमूर्त चीजें इसके बेहतरतम उदाहरण हैं। वास्तव में एक शक्तिशाली राष्ट्र के लिए आवश्यकता स्मार्ट पावर की रहती है, जिसमें सॉफ्ट और हार्ड पावर का सम्यक प्रयोग किया जाता हो। आश्चर्य नहीं कि प्राचीनकाल में कौटिल्य और कामंदक जैसे विचारकों ने राज्य के मामलों में सफलता के लिए सॉफ्ट पावर के प्रयोग की बात कही थी और मौर्य काल इस स्मार्ट पावर के साथ भारतीय इतिहास में शासन का एक अभूतपूर्व उदाहरण रहा।

भारत में सांस्कृतिक समृद्धता व इसकी ज्ञान-विज्ञान परंपरा का दीर्घकालीन समृद्ध इतिहास रहा है, जो विश्व भर के बुद्धिजीवियों एवं जिज्ञासुओं को भारत के प्रति आकर्षित करता रहा है। आश्चर्य नहीं कि इंडोलॉजी के रूप में पूरे विश्व में इसका अध्ययन किया जाता है। विश्व के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में इस विषय पर गहन शोध-अनुसंधान चल रहा है।

फिर भारत 4 पंथों का पालना रहा है। हिंदू, बौद्ध, जैन, सिख यहाँ के सनातन धर्म के प्रारूप हैं; जबकि पारसी, यहूदी, मुसलिम, ईसाई धर्म बाहर से आए। इन धर्मों से जुड़े तीर्थस्थलों में धार्मिक पर्यटन के रूप में भारत की एक विशिष्ट सॉफ्ट पावर है, जो हर वर्ष करोड़ों लोगों को आकर्षित करती है। इनके विकास की ओर सदा से प्रयास जारी हैं।

इसी तरह योग भारत की एक अमूर्त धरोहर है, जिसका फलक हर वर्ष बढ़ता जा रहा है। 21 जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस घोषित करने के बाद से पूरे विश्व से लोग इसमें बढ़-चढ़कर भाग ले रहे हैं। विश्व के सबसे अधिक देशों के लोगों ने इसमें भाग लिया है। योग को एक विरासत के रूप में प्रस्तुत करने में हम सफल रहे हैं।

भारतीय संगीत, नृत्य, कला और वास्तुकला देश की समृद्ध विरासत हैं। तमाम स्मारक, पर्यटक स्थल, ऐतिहासिक और पुरातत्त्वस्थल तथा यूनेस्को विश्व धरोहरस्थल देश के पास उपलब्ध हैं। विदेश मंत्रालय के अंतर्गत भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् न केवल विदेशों में हमारी संस्कृति के प्रचार-प्रसार का कार्य कर रही है, बल्कि सांस्कृतिक विनिमय के लिए अन्य संस्कृतियों का भी आदान-प्रदान हो रहा है।

बॉलीवुड देश की एक सशक्त सॉफ्ट पावर है। यहाँ की फिल्में कई देशों में लोकप्रिय हैं, विशेषकर इसके संगीत और नृत्य लोगों के मनोभावों पर सर चढ़कर बोलते हैं। विदेशियों तक को इन्हें गुनगुनाते देखा जा सकता है तथा इन पर थिरकते देखा जा सकता है।

भारतीय व्यंजनों का लोहा पूरा विश्व मानता है, जो विदेशियों के लिए एक प्रमुख आकर्षण रहते हैं। इनकी विविधता एवं गुणवत्ता पूरे विश्व को चकित करती है। आश्चर्य नहीं कि विश्व के लगभग हर बड़े शहर में 2-4 भारतीय रेस्तरां अवश्य मिलेंगे।

इंडियन डायस्पोरा अर्थात एनआरआई भारत की सॉफ्ट पावर के महत्त्वपूर्ण घटक हैं। लगभग 32 करोड़ भारतीय मूल के लोग सभी महाद्वीपों में फैले हुए हैं, जो न केवल संस्कृति के प्रसार में सहायक रहे हैं, वरन कई बार बस, भारतीय विदेश नीति के लक्ष्यों को बढ़ावा देने में अपनी क्षमता के अनुरूप महत्त्वपूर्ण योगदान देते रहे हैं। निस्संदेह रूप में प्रवासी भारतीयों का स्थान विश्व में क्रमिक रूप से ऊँचा उठता रहा है।

विगत 10 वर्षों में भारतीय कूटनीति में इसके सुविचारित प्रयोग प्रारंभ हुए हैं। हिरोशिमा में हुए जी-7 शिखर सम्मेलन में अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन की प्रशंसा हो या ऑस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री के उद्गार—ये सभी भारतीय सॉफ्ट पावर की शक्ति के उभार को ही दरसाते हैं। कोविड महामारी के बाद, सहयोग के बढ़ते दायरे को भी भारत की एक नूतन सॉफ्ट पावर के रूप में देखा जा सकता है, जिसमें वैश्विक समस्याओं के समाधान में देश की सफल भागीदारी को देखा जा सकता है।

पूरे विश्व में इन प्रयासों की भारी प्रशंसा हुई है, जिनके साथ भारत की भूमिका विश्व के फार्मेसी हब के रूप में सामने आई है। फिर विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में भारत की सॉफ्ट पावर को चुनाव की सर्वोत्तम प्रथाओं के रूप में देखा जा सकता है, जो अहिंसात्मक तरीके से सत्ता परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त करता है। वैश्विक स्तर पर हालाँकि अधिक-से-अधिक शक्ति पाने की तलाश में तमाम युद्ध लड़े जाते रहे हैं, जिनका दौर अभी भी थमा नहीं है।

समय के साथ शक्ति के स्वरूप व माने में परिवर्तन हो रहे हैं तथा हार्ड के स्थान पर सॉफ्ट का प्रयोग अधिक उचित प्रतीत हो रहा है। ऐसे प्रयोग पहले भी होते रहे हैं, लेकिन अब ये अधिक सुविचारित एवं व्यापक पहल का हिस्सा हैं और भारत इनमें अग्रणी भूमिका निभा रहा है।

वास्तव में सॉफ्ट पावर अपने को अच्छा दिखता भर नहीं है। यह इससे बहुत अधिक है। वास्तविकता में सुधार किए बिना छवि को मात्र बाहर से चमकाने भर से ठोस परिणाम की आशा नहीं की जा सकती। वास्तविक शक्ति उसे माना जा सकता है, जो विरोधी को उस तरह से प्रभावित करने में सक्षम होती है, जैसा कि आप चाहते हैं।

यह वास्तव में नैतिक शक्ति है, संस्कृति की आत्मशक्ति है, सत्य एवं संवेदना की शक्ति है, जिसका प्रभाव अचूक एवं अमोघ रहता है। भारत अपनी दैवी नियति के अनुरूप इसी दिशा में आगे बढ़ रहा है। अपनी बढ़ती सॉफ्ट पावर के साथ हार्ड पावर का संगम करता हुआ स्मार्ट पावर के माध्यम से विश्व में अपनी महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय भूमिका की दिशा में अग्रसर है। सामयिक प्रश्न एक ही है कि हम व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्तर पर इसके लिए कितना तैयार हैं? ❑

रागद्वेषौ मनोधर्मौ न मनस्ते कदाचन।
निर्विकल्पोऽसि बोधात्मा निर्विकारः सुखं चर॥

—अष्टावक्र गीता 15/5

अर्थात राग और द्वेष मन के धर्म हैं, तुम्हारे नहीं हैं। तू कभी मन नहीं है। तू निर्विकल्प, निर्विकार, बोध रूप आत्मा है। तू इसमें सुखपूर्वक विचरण कर।

हमारा लक्ष्य : पूर्णता

पूर्ण से हम आविर्भूत हुए हैं, पूर्ण की ओर हमें जाना है, अंततः पूर्ण ही हमें तृप्ति देगा—यह वाक्य उपनिषदों के आरंभ में लिखा हमें दिखाई पड़ता है। इसकी महत्ता क्या है, यह उस संकेत की ओर इशारा करता है, जिसे कि भारतीय संस्कृति सदा से परिभाषित करती आई है—वह है स्वयं में प्रतिष्ठित हो स्वयं की जाग्रति द्वारा स्वयं का उद्धार। यह बात उन्हें ही समझ में आएगी, जिनकी आत्मा इतने उच्च मूल्यों को स्वीकार कर सकने में समर्थ हो अर्थात उनमें सत्य को देख सकने की सामर्थ्य विकसित हो चुकी हो।

जो अपने आप में सदा एकरस एवं जगत् की परिस्थितियों के मध्य अपने को उच्च लक्ष्य के प्रति समर्पित रखने में सफल होते हैं, वही वास्तव में जीवन का मूल्य पहचान पाते हैं। हमें विकसित होना है, परंतु अपनी आत्मा की परिधि में, जिसे अपनी आत्मा का भान है वह कभी भी कुपित मान्यता लिए अपने आप को दूषित विचारों एवं ओछे प्रयोजनों हेतु समर्पित नहीं कर सकता है।

ऐसा व्यक्ति अपने जीवन की जाग्रति द्वारा दूसरों को प्रकाश पहुँचाने में समर्थ है, यही उसकी पहचान है एवं इसके लिए उसे कहीं अन्यत्र भटकना नहीं पड़ता है; क्योंकि उसकी आत्मा स्वयं अपना मार्ग बनाने में समर्थ होती है।

जिसकी आत्मा पर दाग नहीं लगे, जो सांसारिक परिस्थितियों के वशीभूत नहीं हुआ, जिसे कि अपने अंतस् की विराट संपदा का भान है एवं जो स्वयं में परिपूर्ण अनुभव कर आगे बढ़ता है, वही योगी है एवं उसे परम कल्याण का स्वर प्राप्त है।

जब तक भीतर से हम परिपूर्ण नहीं होते, तब तक जगत् का कोई भी प्रयोजन हमें सार्थकता नहीं दे सकता, यही आत्मा का सिद्धांत है। जो इसकी पूर्ति कर लेता है, उसे जीवन में कभी सफलता की कमी नहीं होती; क्योंकि अपने भीतरी केंद्र से संचालित होना ही सफलता है।

जीवन का ध्येय यदि देखा जाए तो वह आत्मोत्कर्ष है, इसके लिए किसी विशेष प्रक्रिया की नहीं, बल्कि स्वयं के आत्म-विगलन एवं संपूर्णता में आत्मभाव की प्राप्ति होने की आवश्यकता होती है।

जब यह हो जाएगा तब प्रत्येक गतिविधि का सार यही निकलेगा कि क्या आत्मा की प्राप्ति हुई ? आत्मा यदि प्राप्त है तो प्राप्त उसे करना है, जो कि आत्मा को उसके विषयों के विलग परम तृप्ति का मार्ग सुझाए, इसे ही प्रज्ञा कहते हैं।

प्रज्ञा का अभिप्राय उस उच्चस्तरीय बुद्धि अथवा मेधा से है, जो कि यथार्थ में आत्मा के अनुसंधान में कार्य करे एवं वह परिणाम उपस्थित करे, जिससे कि आत्मा अपने मूल लक्ष्य एकत्व-प्राप्ति में सफल हो।

उसे जो कुछ चाहिए, वह जगत् से नहीं, बल्कि अपने आप से चाहिए—अपने आप में यदि वह महान बन जाए तो उसे सौभाग्यशाली एवं हर प्रकार की विषमता से परे एक देदीप्त स्वर में प्रकाशित व्यक्तित्व कहा जाएगा। यही उसका चिर-विधान है। इस एक बात को समझने में मनुष्य को अधिकाधिक समय लग जाता है कि वह जिस चीज से परेशान है, वह उसके भीतर की अपूर्णता ही है।

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

अपूर्णता मिट जाए तो जीवन उत्कट स्वर में अपनी आदर्शवादिता का परिचय देने लगता है, उसे हर प्रकार से अपने को उन्नत करने एवं अपनी महान संपदा को ईश्वर के कार्य में लगाने की प्रेरणा प्राप्त होती है।

वह अपनी व्यक्तिगत सत्ता को भुला परमकल्याणकारी मार्ग पर चल पड़ता है, ऐसा इसलिए क्योंकि अब बचाने को कुछ रहा नहीं। प्रेम उस अमरता के स्रोत से इतना हो गया कि शेष कुछ भी अपने को अपने ध्येय-प्राप्ति से वंचित नहीं कर सकता। इसे ही सुख-सौभाग्य की प्राप्ति का विषय एवं अंतरात्मा की गहन पुकार का चरितार्थ होना कहेंगे।

जिन उपकरणों से आत्मा महान बनाई जा सकती है, उनमें सर्वप्रथम है आत्मनिग्रह की प्रक्रिया, उसके बाद विषयों से मन को छुड़ा उसे एकत्व के दिव्य पथ की ओर ले चलना। यही उसके परिष्कार की भी यात्रा है।

हम स्वयं में जब आत्मा के सिद्धांत का पालन करने लगते हैं, उसे उभयपक्षीय निर्माण की ओर गति प्रदान करते हैं तो ही वह संभावना जन्म लेती है, जिसे कि चरित्र की साधना एवं मानव-मन का स्वयं को जानने का अभियान कहा जा सके।

इस यात्रा में एक ही अवरोध है, वह है अपनी क्षुद्रता के त्याग से बचना। जब आत्मा महान बन जाएगी तो वह अपने लिए उन्हीं प्रयोजनों को स्वीकार करेगी, जो कि उसकी गौरव-गरिमा के अनुकूल हों।

स्वयं को जानने से इस जगत् से संबंध विच्छेद नहीं होता, वरन यह तो स्वयं के मूल्य को पहचान अपनी सत्ता को ईश्वर-निर्दिष्ट मूल्यों को समर्पित करना है अर्थात पूर्णता प्राप्ति के बाद अपना अस्तित्व क्षुद्र अहंकार की पूर्ति में नहीं, अपितु महानता के रसगान एवं अपनी केंद्रीय धरोहर के संरक्षण में बीतना चाहिए, जो आत्मा को उज्ज्वल-पथ की ओर गतिशील करने समान है। ❑

चाणक्य का नाम कूटनीति के लिए विश्वविख्यात है। एक बार एक राजा उनसे मिलने पहुँचे और उनसे राजनीति से संबंधित प्रश्न करने लगे। उन्होंने पूछा—"कोई राज्य कैसे अपराजित रह सकता है?" चाणक्य ने उत्तर दिया—"चरित्र बल से। यदि शासन करने वाले का चरित्र शुभ्र होगा तो उसकी कही गई बातों का प्रभाव पड़ेगा अन्यथा राजपाट की लिप्सा वाले लोग उसके आस-पास जम जाएँगे और कुराज प्रारंभ हो जाएगा।" राजा ने आगे पूछा—"शासन सँभालने वालों में क्या गुण होने चाहिए?" चाणक्य बोले—"उनमें आपस में मतभेद नहीं होना चाहिए और यदि हो तो दिखना नहीं चाहिए। उनमें प्रजा के दुःख-दरद का भान, मित्र-शत्रु का बोध और राष्ट्रीयता की भावना होनी चाहिए।" सत्य में यही गुण किसी शासन को स्थायित्व प्रदान करते हैं।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

अचूक ब्रह्मास्त्र है गायत्री-उपासना

भारतीय संस्कृति के चार आधार स्तंभ हैं— गायत्री, गीता, गंगा और गौ। इन सबमें गायत्री का स्थान सर्वप्रथम है; क्योंकि जिसने गायत्री को जान लिया, उसके लिए कुछ और जानना शेष नहीं रहता। गायत्री को जान लेने पर वह शेष चीजें स्वयमेव ही जान लेता है। गायत्री को जान लेने पर साधक, उपासक, आराधक को भौतिक-आध्यात्मिक उपलब्धियाँ स्वयमेव ही हस्तगत हो जाती हैं। अस्तु हर दृष्टि से गायत्री-उपासना का महत्त्व असाधारण है, अद्वितीय है, अकल्पनीय है और अतुलनीय भी।

ब्रह्म को निर्गुण, निराकार, निर्विकार, अक्रिय, अरूप, अनाम, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापी कहा गया है। उसी प्रकार गायत्री भी ब्रह्म ही है। गायत्री कोई स्वतंत्र देवी-देवता नहीं है, बल्कि गायत्री उसी निर्गुण, निराकार, अरूप, अनाम ब्रह्म का क्रियाशील रूप है, नाम है। अस्तु ब्रह्म और गायत्री दोनों एक ही हैं, दोनों में केवल शब्दों का अंतर है।

तत्त्वतः दोनों एक ही हैं। निराकार रूप में गायत्री ही ब्रह्म है और साकार रूप में ब्रह्म ही गायत्री है। इसलिए शतपथ ब्राह्मण (8.5.3.7) में कहा गया है—

ब्रह्म गायत्रीति-ब्रह्म वै गायत्री।

अर्थात ब्रह्म गायत्री है और गायत्री ही ब्रह्म है। जिस प्रकार ईशावास्योपनिषद् के प्रथम मंत्र में ईश्वर के विषय में कहा गया है— '**ॐ ईशावास्यमिदम् सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्**' अर्थात 'अखिल विश्व-ब्रह्मांड में जो कुछ भी जड़-चेतन स्वरूप जगत् है, यह समस्त ईश्वर से व्याप्त है', उसी प्रकार छांदोग्योपनिषद् (3.12.1) में गायत्री के विषय में कहा गया है—'**गायत्री वा इदं सर्वं भूतं यदिदं किंच**' अर्थात यह विश्व जो कुछ भी है, वह समस्त गायत्रीमय है। वही बृ. यो. याज्ञ. (2.66) में कहा गया है—

भूर्भुवः स्वरिति चैव चतुर्विंशाक्षरा तथा।
गायत्री चतुरो वेदा ओंकारः सर्वमेव तु॥

अर्थात 'भूर्भुवः स्वः' यह तीन महाव्याहृतियाँ, चौबीस अक्षर वाली गायत्री तथा चारों वेद निस्संदेह ओंकार (ब्रह्म) स्वरूप हैं। निर्गुण, निराकार, अरूप, अनाम, अव्यक्त, ब्रह्म ही व्यक्त रूप में गायत्री हैं और स्कंद पुराण, काशीखंड (4.9.58) में तो यहाँ तक कहा गया है कि—

गायत्र्येव परोविष्णुर्गायत्र्येव परः शिवः।
गायत्र्येव परो ब्रह्मा गायत्र्येव त्रयी ततः॥

अर्थात गायत्री ही दूसरे विष्णु हैं और शंकर जी दूसरे गायत्री ही हैं। ब्रह्मा जी भी गायत्री में परायण हैं, क्योंकि गायत्री तीनों देवों का स्वरूप है।

श्रीमद्भगवद्गीता (10.35) में भगवान विष्णु कहते हैं—'**गायत्री छंदसामहम्**' अर्थात छंदों में मैं गायत्री छंद हूँ। गायत्री मेरा ही स्वरूप है। इस प्रकार हम देखते हैं कि निर्गुण, निराकार, अरूप, अनाम, अक्रिय और अव्यक्त ब्रह्म ही साकार व व्यक्त रूप में गायत्री हैं और गायत्री सभी देवों का स्वरूप है। इसलिए यह कहा गया है कि जो गायत्री की उपासना करता है, वह ब्रह्म

की ही उपासना करता है और साथ ही जो गायत्री की उपासना करता है, वह सर्वदेवों की उपासना एक साथ कर लेता है; क्योंकि गायत्री सभी देवों का स्वरूप है, इसलिए गायत्री मंत्र को महामंत्र कहा गया है।

गायत्री को मंत्रों का राजा कहा गया है। गायत्री को सार्वभौम मंत्र कहा गया है; क्योंकि यह सबके लिए समान रूप से लाभप्रद और उपयोगी है। गायत्री प्रत्यक्ष अद्वैत ब्रह्म की बोधिका है। गायत्री मोक्ष देने वाली, परमात्मस्वरूप और ब्रह्मतेज से युक्त शक्ति है और मंत्रों की अधिष्ठात्री है। इसलिए प्रणव, व्याहृति और गायत्री—इन तीनों से परब्रह्म की उपासना करनी चाहिए।

चूँकि गायत्री सभी वेदों, उपनिषदों, पुराणों, गीता, रामायण, रामचरितमानस आदि का बीज और सार है, अस्तु जो गायत्री को जान लेता है, जो निरंतर उपासना, साधना करते हुए गायत्री का साक्षात्कार कर लेता है—उसे ब्रह्मज्ञान और सभी शास्त्रों का ज्ञान भी स्वयमेव ही हो जाता है।

गायत्री सनातन और अनादि मंत्र है। कहते हैं कि सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा को आकाशवाणी द्वारा गायत्री मंत्र प्राप्त हुआ था। इस मंत्र की साधना करके ही उन्हें सृष्टि-निर्माण की शक्ति प्राप्त हुई थी। गायत्री को वेदमाता कहा गया है; क्योंकि चारों वेद गायत्री की व्याख्या मात्र हैं।

प्राय: सभी प्राचीन ऋषियों ने गायत्री मंत्र की साधना व गायत्री माता के आशीर्वाद से ही असीमित सिद्धियाँ और सामर्थ्य को प्राप्त किया था। गायत्री-साधना से ही राजा विश्वरथ कालांतर में महर्षि विश्वामित्र बने और उन्हें ब्रह्मपद की प्राप्ति हुई थी। उन्होंने गायत्री-साधना, गायत्री पुरश्चरण के बल पर ही सृष्टिसृजन करने की शक्ति भी प्राप्त कर ली थी।

आधुनिक युग में गायत्री के सिद्ध साधक परमपूज्य गुरुदेव अपने हिमालयवासी सूक्ष्म शरीरधारी गुरु के संरक्षण में 24 वर्षों तक 24-24 लाख गायत्री मंत्र जप के 24 महापुरश्चरण संपन्न करने वाले एकमात्र महायोगी हुए, जिन्होंने ब्रह्मस्वरूपा गायत्री का साक्षात्कार किया और गायत्री-साधना से प्राप्त ब्रह्मबल से मानव में देवत्व का उदय व धरती पर स्वर्ग का अवतरण का उद्घोष किया और मूढ़मान्यताओं एवं पाखंड के कारण वर्षों से प्रतिबंधित गायत्री मंत्र की साधना को प्रतिबंध की बेड़ियों से मुक्त कर सर्वजन सुखाय-सर्वजन हिताय और सार्वभौम कल्याण की भावना से सबके लिए सुलभ कर दिया।

पूज्यवर ने गायत्री महाशक्ति के संबंध में कहा कि गायत्री भूलोक की कामधेनु है; क्योंकि यह आत्मा की समस्त क्षुधा-पिपासाएँ शांत करती है। गायत्री 'सुधा' है; क्योंकि यह साधक को जन्म-मृत्यु के चक्र से छुड़ाकर सच्चा अमृत प्रदान करने की शक्ति से परिपूर्ण है।

पूज्यवर ने आगे कहा कि गायत्री पारसमणि है; क्योंकि उसके स्पर्श से लोहे के समान कलुषित अंत:करणों का शुद्ध स्वर्ण जैसा महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो जाता है। गायत्री वेदमाता है; क्योंकि इसमें वेदों का बीज व्याप्त है। गायत्री 'देवमाता' है; क्योंकि यह साधक में देवत्व की स्थापना करती है। गायत्री 'विश्वमाता' है; क्योंकि यह सबका कल्याण करती है।

गायत्री की महिमा बताते हुए पूज्य गुरुदेव ने कहा है कि गायत्री 'कल्पवृक्ष' है; क्योंकि इसकी छाया में बैठकर मनुष्य उन सब कामनाओं को पूर्ण कर सकता है, जो उसके लिए उचित एवं आवश्यक हैं। जो श्रद्धा और भक्तिपूर्वक गायत्री माता का आँचल पकड़ लेता है और गायत्री-उपासना करता

है, उसका कल्याण सुनिश्चित हो जाता है। गायत्री को 'ब्रह्मास्त्र' कहा गया है; क्योंकि कभी भी किसी की गायत्री-साधना निष्फल नहीं जाती। इसका प्रयोग कभी भी व्यर्थ नहीं जाता।

मार्कण्डेय ऋषि ने भी (विष्णु धर्मोत्तर-1.165.15 में) कहा है कि गायत्री जप जैसे बने, वैसे करने से भी मनुष्य को पवित्र कर उसकी सभी कामनाएँ सफल बना देता है, फिर वैध रीति से जपानुष्ठान करने वाले के विषय में कहना ही क्या?

अब प्रश्न यह उठता है कि साधक को नित्य गायत्री-उपासना कैसे करनी चाहिए? इस संबंध में महर्षि विश्वामित्र कहते हैं कि प्रकाश सहित सत्यानंद स्वरूप ब्रह्म को हृदय में और सूर्यमंडल में ध्यान करते हुए, कामनारहित हो गायत्री मंत्र को यदि जपे तो साधक, उपासक अविलंब संसार के आवागमन से छूट जाता है।

जहाँ तक गायत्री-उपासना का प्रश्न है तो शास्त्रों में त्रिकाल संध्यावंदन का उपदेश किया गया है। साधक को ब्राह्ममुहूर्त में स्नानादि से निवृत्त होकर, स्वच्छ वस्त्र धारण कर, किसी पवित्र आसन पर बैठकर, सुखासन, पद्मासन, सिद्धासन या स्वस्तिकासन में से किसी भी आसन पर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठना चाहिए। फिर षट्कर्म अर्थात पवित्रीकरण आदि क्रिया करके अंतरिक्ष में उदीयमान सूर्य का अपने हृदय में ध्यान करते हुए गायत्री मंत्र का अर्थ चिंतन करते हुए, गायत्री महामंत्र का जप करना चाहिए।

जप, माला से या बिना माला के भी किया जा सकता है। फिर दोपहर में स्नानादि से निवृत्त होकर उत्तर दिशा की ओर मुख करके गायत्री-उपासना करनी चाहिए। सायंकाल में पश्चिम दिशा की ओर मुख करके गायत्री-उपासना करनी चाहिए।

यदि त्रिकालसंध्या न बन पड़े तो सुबह-शाम करनी चाहिए। यदि सुबह-शाम दो समय संभव न हो तो कम-से-कम ब्राह्ममुहूर्त में उठकर एक बार साधना अवश्य करनी चाहिए। प्रारंभ में 3 माला गायत्री मंत्र का जप करना चाहिए। एक माला जप पूर्ण होने में लगभग 5 मिनट का समय लगता है।

माला की संख्या धीरे-धीरे बढ़ाते रहना चाहिए, जैसे 3,7,11,21,27 माला। बिना माला के साधना का समय 15 मिनट से प्रारंभ कर अपनी स्थिति व सुविधानुसार घंटों तक बढ़ाया जा सकता है। परमपूज्य गुरुदेव जैसे ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मज्ञानी, गायत्री महाविद्या के मर्मज्ञ गुरु से गायत्री महामंत्र की दीक्षा लेकर गायत्री की उपासना करने से उपासना शीघ्र फलीभूत होती है; और हाँ! उपासना के साथ साधना और आराधना का क्रम भी चलते रहना चाहिए।

उपासना में हम ब्रह्म का ध्यान करते हुए ब्रह्म के पास होते हैं। उपासना में उपासक उपास्य के पास होता है। वहीं साधना का अर्थ संयम है, साधक के जीवन में संयम होना चाहिए। इंद्रिय संयम होना चाहिए। साधक को सात्त्विक आहार ग्रहण करना चाहिए। अशुभ, बुरे और पापकर्मों से दूर रहना चाहिए।

आराधना का अर्थ है—सेवा। किसकी सेवा? विश्व-ब्रह्मांड के रूप में अभिव्यक्त हो रहे ईश्वर की सेवा, जीवों की सेवा, प्राणियों की सेवा। नर और नारी के रूप में अभिव्यक्त हो रहे नारायण की सेवा। इस प्रकार उपासना-साधना-आराधना के त्रिवेणी संगम में नित्य स्नान करते रहने से साधक को वह सब कुछ प्राप्त हो जाता है, जो बड़ी-बड़ी कष्टसाध्य साधनाओं से भी प्राप्त नहीं हो पाता।

गायत्री की नित्य साधना के इच्छुक साधकों को गायत्री महाविद्या के मर्मज्ञ महायोगी परमपूज्य गुरुदेव युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा जी द्वारा रचित

'गायत्री की दैनिक साधना', 'गायत्री महाविज्ञान', 'गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ', 'गायत्री-साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि' आदि पुस्तकों का सांगोपांग स्वाध्याय करना चाहिए, जिससे उन्हें गायत्री-साधना की विधि का सम्यक ज्ञान हो सके और तदनुरूप साधना करके वे आत्मकल्याण के मार्ग पर अग्रसर हो सकें।

गायत्री-साधना के इच्छुक साधकों के लिए गायत्री शक्ति की घनीभूत आध्यात्मिक ऊर्जा से ओत-प्रोत गायत्री तपोभूमि, मथुरा व गायत्री तीर्थ, शांतिकुंज में आकर परमपूज्य गुरुदेव की सूक्ष्म सत्ता से दीक्षित होकर 9 दिवसीय साधना सत्र संपन्न करना विशेष रूप से लाभप्रद व उपयोगी है।

अस्तु गायत्री तीर्थ शांतिकुंज की दिव्य ऊर्जा में वर्ष में 1 या 2 बार आकर साधना एवं अनुष्ठान करना साधकों के लिए विशेष उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है। ❑

बाजिल इटली के प्रसिद्ध संत हुए हैं। रोम की जनता उन पर बहुत श्रद्धा रखती थी।

इटली का जो नया राजा बना, वह बहुत क्रूर एवं अत्याचारी था। जब जनसामान्य पर उसके अत्याचार बढ़ने लगे तो एक दिन बाजिल ने राजदरबार में संदेश भिजवाया कि वे राजा के क्रियाकलापों का विरोध करते हैं।

राजा के लिए यह संभव नहीं था कि वह बाजिल जैसे लोकप्रिय संत के विरुद्ध कुछ कर पाता, अतः उसने अपने दूतों को संत बाजिल के पास भेजकर प्रस्ताव रखा—"यदि वे अपना मुँह बंद रखें तो वे अपार धन-दौलत के स्वामी बन सकते हैं।"

बाजिल ने उत्तर में कहा—"मैं परमात्मा का दिया खाता हूँ और धर्म की राह पर चलता हूँ। भगवान का अनुग्रह और सत्य का साथ, यही मेरे हथियार हैं। इस पथ से मुझे लालच दिखाकर या मौत का भय दिखाकर हटाया नहीं जा सकता।"

उत्तर प्राप्त होने पर राजा को अपने व्यवहार पर अंकुश लगाना पड़ा एवं जनसामान्य के लिए जीना स्वीकार करना पड़ा।

आत्मसमर्पण है प्रेम

जिसे हम प्रेम कहते हैं, वह वास्तव में अपने अंतरंग में छिपी दिव्य भावना को उजागर कर, उससे महान सौभाग्य की दिशा में बढ़ना है। इसके लिए हमें पात्रतायुक्त आचरण एवं अपने जीवन के लक्ष्य के लिए कटिबद्ध हो प्रेरणा ग्रहण करनी पड़ती है। जिसके पास प्रेमरूपी महान संपदा है, उसका जीवन कभी भी सांसारिक विषय-क्रीड़ा एवं मतभावों के आरोपण में नहीं बीतता है। यही प्रेम की परिभाषा है।

जो मनुष्य इसे समझ लेते हैं उनके लिए जीवन अत्यंत ही सरल एवं सेवा के उपयोग में लाने योग्य हो जाता है अन्यथा प्रेम के गलत अर्थों को स्वीकार कर हम अंतरात्मा के पतन एवं समाज में भ्रांत धारणाओं के प्रसार में ही भूमिका निभाते हैं।

प्रेम वह महान औषधि है, जो एक बार किसी को मिल जाए तो उसके जीवन में प्रकाश का आविर्भाव हुए बिना नहीं रहता, उसका अंत:करण सदा के लिए प्रेम के विराट वैभव से परिपूर्ण हो उसे आह्लाद प्रदान करता है। यही प्रेम की विशेषता है कि वह संसार से कभी अतिक्रमित नहीं होता, उसकी छाँह में मनुष्य अपना-पराया भूलकर उसे ही अंगीकार कर आगे बढ़ने की नीति अपनाता है।

प्रेम आत्मसमर्पण का पर्याय है। हमारी जागरूकता जितनी अधिक होगी, हम उतना ही प्रेम के सही अर्थ को पकड़ पाएँगे। प्रेम विषयों का जंजाल नहीं, बल्कि अंत:करण की पवित्रता का पर्याय है, प्रेम शाश्वत के प्रति अनुग्रह एवं विराट ब्रह्मांड में उस परमात्मा को ही सर्वत्र देखने की चिर-प्रतिज्ञा है।

प्रेम में समस्त जीव-जंतुओं के प्रति करुणा एवं उनकी हित-कामना के साथ विश्व-कल्याण के प्रति उत्कट जिजीविषा का भाव भी रहता है। प्रेम अंत:करण की महान वृत्ति का नाम है, इसे साधारण रूप से मनुष्य कुछ भी समझ ले, परंतु प्रेम होता अपनी आत्मा के स्वाभिमान से एवं उसके उन्नत परिष्कार क्रम से ही है। इसे ही प्रेम का दिव्य स्वरूप एवं उसकी महान आकांक्षा की फलश्रुति कहेंगे।

प्रेम अंतत: आत्मविगलन की ही क्रिया-प्रतिक्रिया है। हमारा प्रेम जितना परिपूर्ण होगा, उसमें संसार से आसक्ति-विकार जितने कम एवं अपने ध्येय-चिंतन हेतु प्रबल पुरुषार्थ की उमंग जितनी होगी—प्रेम का दिव्य स्वरूप उतना ही परिलक्षित होगा। यही प्रेम का वास्तविक क्रियाकलाप है। ❑

प्रज्ञा परिजनों की गहराई एवं ऊँचाई को इन दिनों इस आधार पर परखा जा रहा है कि वे आड़े समय में निजी व्यामोह पर कितना अंकुश लगा सके और युगधर्म के निर्वाह में कितना अनुदान प्रस्तुत कर सके। इन दिनों समयदान प्रमुख है, अंशदान गौण। प्रतिभाएँ ही अपने श्रम, समय एवं मनोयोग को लगाकर महान कार्य संपन्न करती रही हैं। प्रज्ञा परिवार की जाग्रत आत्माओं को समयदान के लिए अवसर खोजना ही होगा।

—परमपूज्य गुरुदेव

भाग्य को लिखने की कलम है कर्म

कर्म बड़ा है या भाग्य ? इसको लेकर सदियों से बहस और विमर्श होता रहा है। कर्म को बड़ा मानने वाले, कर्म में विश्वास रखने वाले लोग यह कहते रहे हैं कि कर्म ही सब कुछ है। कर्म ही सर्वोपरि है।

कर्म से ही सुख-दु:ख प्राप्त होता है। कर्म से मनुष्य जो कुछ भी चाहे प्राप्त कर सकता है। वहीं भाग्य में भरोसा रखने वाले भाग्यवादी लोगों का यह मत रहा है कि चाहे जो कुछ भी कर्म कर लो, जितना भी कर्म कर लो, मिलेगा वही और उतना ही, जितना भाग्य में लिखा है।

कर्मवादी और भाग्यवादी दोनों के अपने-अपने तर्क हैं, पर वस्तुत: सत्य क्या है ? कर्म और भाग्य में बड़ा कौन है ? क्यों है और कैसे है ? इसको लेकर एक बड़ी रोचक कहानी है।

कहानी यह है कि एक बार भगवान महावीर एक गाँव से होकर गुजर रहे थे। उस गाँव में एक व्यक्ति का मिट्टी के बरतनों का बड़ा अच्छा व्यापार चल रहा था।

वह अपने व्यापार के अच्छी तरह चलने का कारण अपने अच्छे भाग्य को मानता था। उसका मानना था कि जब किसी व्यक्ति के साथ अच्छा होता है तो उसका भाग्य अच्छा होता है और जिस व्यक्ति के साथ बुरा होता है, उसका भाग्य भी बुरा होता है।

भगवान महावीर ने उससे कहा—''भंते! मानव का हर कार्य पुरुषार्थ से होता है। कार्य करने से ही उसका फल प्राप्त हो पाना संभव होता है। पहले व्यक्ति कर्म करता है, पुरुषार्थ करता है, तब उसका भाग्य चमकता है।''

वह व्यक्ति महावीर की इस बात से किसी भी तरह सहमत नहीं हुआ; क्योंकि उसका मानना था कि भाग्य प्रबल होने पर ही व्यक्ति व्यापार, शिक्षा, रोजगार आदि में उन्नति कर पाता है, सफल हो पाता है।

उसकी बातें सुनकर भगवान महावीर बोले—''अच्छा बताओ, मिट्टी के ये बरतन कौन बनाता है ?'' वह व्यक्ति बोला—''मैं बनाता हूँ।'' महावीर बोले—''तुम मिट्टी के बरतन ही क्यों बनाते हो ?'' वह व्यक्ति बोला—''क्योंकि यही मेरा पेशा है।'' महावीर फिर बोले—''यदि कोई तुम्हारे इन बरतनों को फोड़ दे तो ?''

वह व्यक्ति बोला—''तो मैं यह मान लूँगा कि इनके भाग्य में फूटना ही लिखा होगा।'' इस पर महावीर मुस्कराकर बोले—''यदि कोई तुमसे अकारण मार-पीट करने लगे तो क्या करोगे ?'' यह सुनकर वह व्यक्ति गुस्से में बोला—''कोई मुझे अकारण क्यों मारेगा ? यदि वह ऐसा करेगा तो मैं भी बदले में उसे मारूँगा।''

उस व्यक्ति का जवाब सुनकर भगवान महावीर ने मुस्कराते हुए कहा—''अब तुम भाग्य के बीच में क्यों आ रहे हो ? हो सकता है कि तुम्हारे भाग्य में अकारण पिटना लिखा होगा ?'' यह सुनते ही उस व्यक्ति की आँखें खुल गईं और उसे भगवान महावीर की बात समझ में आ गई। अब वह समझ चुका था कि हम जैसा कर्म करते हैं, हमारा भाग्य भी उसी के अनुसार बनता है और उसी अनुरूप फल देता है।

कर्म और भाग्य के संदर्भ में एक और रोचक कथा भगवान बुद्ध से जुड़ी है। कथा के अनुसार—

एक व्यक्ति अपने दु:खों के लिए हमेशा अपने भाग्य को कोसता रहता था और अपने दु:खों के लिए वह स्वयं को नहीं, बल्कि अपने भाग्य को जिम्मेदार मानता था।

वह कई दिनों से भगवान बुद्ध के प्रवचन सुन रहा था। एक दिन उस व्यक्ति ने भगवान बुद्ध से कहा—"तथागत मैं रोज आपके प्रवचन सुन रहा हूँ, पर मुझे कोई लाभ नहीं मिल रहा है। आपकी सारी बातें सच हैं, पर मेरे जीवन में कोई बदलाव नहीं आ रहा है। लगता है कि मेरा भाग्य ही खराब है।"

भगवान बुद्ध ने उस व्यक्ति से पूछा—"तुम कहाँ रहते हो?" उसने जवाब दिया—"मैं श्रावस्ती में रहता हूँ।" उन्होंने पुनः पूछा—"श्रावस्ती यहाँ से कितनी दूर है?" उस व्यक्ति ने वहाँ से श्रावस्ती की दूरी कितनी है, यह बताया। इसके बाद बुद्ध ने फिर पूछा—"तुम वहाँ कैसे जाते हो?"

उस व्यक्ति ने बताया—"कभी घोड़े पर, कभी बैलगाड़ी पर बैठकर तो कभी पैदल ही जाता हूँ।" भगवान बुद्ध ने फिर पूछा—"तुम्हें वहाँ पहुँचने में कितना समय लगता है?" व्यक्ति ने पहुँचने का समय भी बता दिया। इसके बाद बुद्ध ने अंतिम प्रश्न पूछा—"क्या तुम यहाँ बैठे-बैठे ही श्रावस्ती पहुँच सकते हो?"

इस प्रश्न के जवाब में व्यक्ति ने कहा—"भगवन्! भला यह कैसे संभव हो सकता है? इसके लिए तो चलना ही पड़ेगा, तभी मैं वहाँ पहुँच सकता हूँ।"

तब बुद्ध बोले—"जैसे चलने से ही श्रावस्ती पहुँच सकते हो, वैसे ही अच्छे कर्म करने से ही अच्छे फल की प्राप्ति कर सकते हो। कर्म-पथ पर चलते रहने से ही मंजिल तक पहुँच सकते हो और अपने जीवन को सुखी बना सकते हो। अच्छे कर्म से ही अच्छे भाग्य का निर्माण होता है।

बुद्ध की बातें सुनकर कर्म और भाग्य को लेकर उस व्यक्ति की सोच बदल गई और वह अच्छे कर्म करने में संलग्न हो गया।

उपरोक्त दोनों कहानियों का सार तत्त्व यही है कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है। हमारे अच्छे-बुरे कर्म ही अच्छे-बुरे भाग्य के रूप में अभिव्यक्त होकर हमें तदनुरूप फल प्रदान करते हैं।

हमें जीवन में सुख-दु:ख जो कुछ भी मिलता है, वह हमारे अच्छे-बुरे कर्मों का ही फल है, प्रतिफल है, परिणाम है। हमारी किस्मत में हमारे भाग्य में वही लिखा होता है, जिसे हमने ही अपनी कर्मरूपी कलम से लिखा है। भाग्य कुछ और नहीं, वरन हमारे ही कर्मों की अभिव्यक्ति है। इसलिए भाग्य नहीं, कर्म ही प्रधान है।

कर्म भाग्य को लिखने की कलम है। जैसे हम कलम से कविता, कहानी, जो कुछ चाहे लिख सकते हैं, वैसे ही हम अपनी कर्मरूपी कलम से अच्छे-बुरे भाग्य को लिख सकते हैं, बना सकते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं; क्योंकि यदि कर्म कलम है तो भाग्य कागज।

अस्तु हम अच्छा-बुरा जैसा भी चाहें अपना भाग्य बना सकते हैं, लिख सकते हैं। कर्मरूपी कलम से हम जो कुछ चाहें, लिख सकते हैं, यदि हम जीवन में सुख-शांति-सफलता चाहते हैं तो हमें सदैव शुभकर्म, पुण्यकर्म, अच्छे कर्म करते रहना चाहिए।

अच्छे कर्म से हम न सिर्फ अच्छे भाग्य का निर्माण कर सकते हैं; बल्कि बुरे भाग्य को, दुर्भाग्य को भी सौभाग्य में बदल सकते हैं। जप, तप, ध्यान, ज्ञान, भक्ति, सेवा, परोपकार के निरंतर अभ्यास से हम अपने पूर्वकृत कर्मों से जनित बुरे प्रारब्ध को, दुर्भाग्य को मिटाकर अच्छे भाग्य का निर्माण कर सकते हैं और सुखी एवं सफल हो सकते हैं। ❑

पर्व विशेष-गणतंत्र दिवस

राष्ट्र की आराधना का पर्व

भारतवर्ष की राष्ट्रीय अस्मिता, गौरव और स्वाभिमान के बोध का पर्व है—गणतंत्र दिवस। हमारा देश एक महान लोकतांत्रिक गणराज्य है। भारत की संस्कृति एवं आध्यात्मिक मूल्यों की विरासत इसे समूचे विश्व में अद्वितीय और श्रेष्ठ बनाती है।

प्रत्येक वर्ष 26 जनवरी को मनाया जाने वाला 'गणतंत्र दिवस' हम सभी के लिए अपने भीतर राष्ट्रीय भावना को जीवंत और जाग्रत बनाए रखने तथा इसकी सुरक्षा, शांति एवं समृद्धि में जन-जन की भागीदारी का अनुभव कराने वाला अनुपम राष्ट्रीय पर्व है।

इस दिन सभी भारतीयों में देश की राजनीतिक स्वतंत्रता और लोकतंत्र की स्थापना का गर्व और उत्साह देखते ही बन पड़ता है। देश इस वर्ष अपना 76वाँ गणतंत्र दिवस मनाने जा रहा है। एक महान देश के नागरिक होने के स्वाभिमान का प्रत्यक्ष अनुभव कराने वाला यह दिन हम सभी के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

एक लंबे संघर्ष, त्याग और बलिदान के फलस्वरूप जब देश स्वतंत्र हुआ तो; उस स्वतंत्रता को सार्थकता देने वाला, सुरक्षित और संरक्षित रखते हुए आगे बढ़ाने वाला कार्य लोकतंत्र की स्थापना के कारण ही संभव हो सका है, लेकिन लोकतंत्र की स्थापना मात्र से ही बात नहीं बन गई, अपितु लोकतंत्र के संचालन और सफलता का असली मर्म इसके विशेष संविधान में निहित रहा है। चूँकि 26 जनवरी, 1950 को संविधान का क्रियान्वयन किया गया, इसलिए यह दिन विशेष महत्त्व का हो जाता है।

यह याद कराता है कि संविधान के निर्माण एवं उसे प्रत्येक नागरिक को सौंपने के पीछे कौन-कौन-सी चुनौतियाँ, परिस्थितियाँ मौजूद रहीं व निर्माताओं ने उनका कैसे समाधान-समन्वय किया। यह याद कराता है कि लोकतंत्र को साकार बनाने वाली स्वतंत्रता की प्राप्ति में किसने त्याग, बलिदान और मातृभूमि के लिए समर्पण के महान आदर्श स्थापित किए हैं। उनको श्रद्धांजलि अर्पित करने का दिन है।

यह दिन उन सभी को नमन करने और यह याद करने का अवसर है, जिन्होंने देश की अद्यतन लोकतांत्रिक यात्रा में इसकी शांति, सुरक्षा और समृद्धि के लिए प्राणों तक की आहुति समर्पित कर दी है। राष्ट्र के शौर्य, साहस, वीरता को चरितार्थ करने वाले सपूतों के सम्मान का यह दिन है; क्योंकि उन्हीं ने देश का मस्तक सदैव ऊँचा उठाए रखने की जिम्मेदारी अपने कंधों पर सँभाल रखी है, वे ही सच्चे नायक हैं।

देश के हर गली-मुहल्ले, ग्राम-नगर से लेकर बड़े शहरों और राजधानी तक हर्षोल्लास के साथ राष्ट्र की आराधना का यह पर्व प्रतिवर्ष मनाया जाता है। इसमें समूचा जनमानस अपने सौभाग्य को प्रत्यक्ष अनुभव कर पाता कि सबसे बड़ा लोकतंत्र होने के साथ ही अपने ज्ञान, संस्कृति, धर्म, अध्यात्म और मानवता के उच्चतम आदर्शों की विरासत को राष्ट्र ने अपने भीतर कितनी खूबसूरती से सँजोया हुआ है।

तीनों सेनाओं का शौर्य-पराक्रम, राज्यों की झाँकियाँ जैसे सैकड़ों आयोजन विविधता में एकता, समता और सामंजस्य की शक्ति—सब मिलकर

हृदय को आह्लादित कर गर्व से भर देते हैं। इस देश के नागरिक होने का स्वाभिमान प्रत्येक के चेहरे पर स्पष्ट उभर आता है।

इस पर्व के साथ प्रत्येक नागरिक की कुछ जिम्मेदारी और राष्ट्रनिष्ठा का पक्ष भी जुड़ा है, जिसे प्रायः अनदेखा कर दिया जाता है। जिम्मेदारी है एक सच्चे, ईमानदार और चरित्रवान नागरिक बनने की तथा राष्ट्रनिष्ठा का तात्पर्य है राष्ट्रहित में जो भी बन पड़े, उसे तत्परता और प्राथमिकता से करने की।

लोकतंत्र में नागरिक ही राष्ट्र का प्रहरी, संविधान का सिपाही, मातृभूमि का कर्त्तव्यनिष्ठ योद्धा होता है। किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी पूँजी उसकी प्रजा है और प्रजा का सबसे बड़ा धन उसका चरित्र है।

इसी आधार पर राष्ट्र की उन्नति, सुख-शांति और कल्याण का लक्ष्य सिद्ध होता है। नागरिक कर्त्तव्यों की अवहेलना और चिंतन-चरित्र की गिरावट से समूचा राष्ट्र संकट में आ जाता है और लोकतंत्र की सफलता भी अनिश्चित होने लगती है।

वर्तमान में हमारा देश भी ऐसी चुनौतियों और समस्याओं से अछूता नहीं है। भाषावाद, प्रांतवाद, संप्रदायवाद जैसी विघटनकारी प्रवृत्तियाँ राष्ट्रीय एकता और समता के आदर्श को आएदिन खंडित करती देखी जा सकती हैं। जात-पाँत, ऊँच-नीच की अनेकों समाजगत कुरीतियाँ, अंधपरंपराएँ, समाज के आंतरिक विभेद किसी कोढ़ की तरह राष्ट्रीय चरित्र को घायल किए हुए हैं।

'माता भूमि पुत्रोहं पृथिव्या', 'वसुधैव कुटुंबकम्', 'सर्वे भवन्तु सुखिनः', 'वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः' जैसे हमारे राष्ट्रीय आदर्श मूल्यों को कलंकित करने वाले कृत्यों को फलने-फूलने का अवसर मिलता जा रहा है। लोकतांत्रिक नेतृत्व के संगठनों में भी संकीर्णता, स्वार्थपरता, कट्टरता जैसी विसंगतियों के उभार बने ही रहते हैं और देश की अखंडता को चोटिल करते रहते हैं।

व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के सिद्धांत, आदर्श और मूल्य भी केवल संचार माध्यमों की विषयवस्तु बनते जा रहे हैं। राष्ट्र की संपत्ति हो या जीवनोपयोगी साधन-संसाधन—इनका अपव्यय, अनावश्यक संग्रह, अमर्यादित दोहन किसी से छिपा नहीं है।

आधुनिकता की भोगवादी प्रवृत्तियों में सभ्यता, संस्कृति और संस्कार तिरोहित हो रहे हैं तथा राष्ट्रीय अस्मिता एवं पहचान खोते जा रहे हैं। फैशनपरस्ती, नशा, विलासिता, स्वच्छंदता और दिखावे की एक अलग ही होड़ लगी हुई है। विज्ञान और तकनीकी के दुरुपयोग ने चुनौतियों का नया मोर्चा खोल रखा है। ऐसी ही अगणित चुनौतियाँ और समस्याएँ अपना सिर उठाए खड़ी हैं।

उक्त सब बातों की चर्चा इसलिए आवश्यक हो जाती है; क्योंकि हमारा यह राष्ट्रीय पर्व इनके प्रति संवेदनशील और जिम्मेदार होने का आह्वान लेकर भी प्रस्तुत होता है। ऐतिहासिक विरासत और आदर्शों पर गौरवान्वित होने मात्र से बात नहीं बनने वाली, अपितु विरासत को सँजोये रखने की जिम्मेदारी और चुनौतियों के सामने राष्ट्रनिष्ठा के कर्त्तव्यों के लिए प्रेरित व संकल्पित होने का साहस भी इस पर्व की सार्थकता का अभिन्न हिस्सा है। इस दिशा में जागरूक होना और अन्यों को बनाना सभी की सम्मिलित आवश्यकता है।

परमपूज्य गुरुदेव स्वयं स्वतंत्रता आंदोलन के सक्रिय दूत रहे और उन्होंने अपने विचारक्रांति अभियान में राष्ट्र-निर्माण को भी युग की माँग कहा है। उनके विचारों में राजनीतिक स्वतंत्रता के बलबूते लोकतांत्रिक व्यवस्था को स्थापित करना तो राष्ट्र-निर्माण का केवल एक पहलू है, परंतु

राष्ट्र की असली आत्मा यहाँ की आध्यात्मिक परंपराओं, सांस्कृतिक मूल्यों और चारित्रिक वैशिष्ट्य में सन्निहित है। इसके लिए किसी बाह्य तंत्र की आवश्यकता नहीं है, यह तो प्रत्येक नागरिक के चिंतन, चरित्र और भावना के परिवर्तन, रूपांतरण का क्षेत्र है।

श्रेष्ठ चिंतन, उदात्त चरित्र और विशाल हृदय- यही हमारी अद्यतन गौरवगाथा का मूल आधार रहा है और आगे भी रहेगा। राष्ट्र-निर्माण की यह कसौटी प्रत्येक नागरिक पर समान रूप से लागू होती है।

पूज्य गुरुदेव के विचारों में राष्ट्र की मूलभूत इकाई व्यक्ति स्वयं है। व्यक्ति से परिवार, परिवारों से समाज और समाजों से मिलकर राष्ट्र-निर्माण तक की एक क्रमिक यात्रा है। यदि राष्ट्र के स्तर पर कोई परिवर्तन करना हो तो उसकी शुरुआत व्यक्ति के परिवर्तन से होती है।

अत: व्यक्ति-निर्माण को यदि साध लिया जाए तो राष्ट्र-निर्माण भी स्वत: संभव हो जाएगा। चूँकि समस्याएँ चाहें व्यक्तिगत जीवन की हों अथवा राष्ट्र की, उनको उत्पन्न करने वाला भी व्यक्ति ही है और समाधान की जिम्मेदारी भी प्रत्येक व्यक्ति की ही है।

प्रत्येक व्यक्ति को यह अनुभव करना चाहिए कि वह स्वयं के साथ-साथ परिवार, समाज और राष्ट्र की शक्ति एवं सामर्थ्य का केंद्र है। ऐसे में उसके चिंतन, चरित्र और व्यवहार की थोड़ी भी निकृष्टता सभी स्तरों को प्रभावित कर बड़े संकटों का कारण बन सकती है। इसलिए प्रत्येक को अपने स्वयं के प्रति सजग बनने और चरित्रनिष्ठ आचरण करने में ही एक आदर्श नागरिक होने का मर्म समाहित है।

राष्ट्र-निर्माण के इस मर्म को देश के प्रत्येक नागरिक तक पहुँचाने तथा राष्ट्रभक्ति और राष्ट्रप्रेम की प्रतिष्ठापना करने वाले पूज्यवर के इन विचारों को स्वयं भी आत्मसात् करने की जिम्मेदारी प्रत्येक गायत्री परिजन की है। पूज्य गुरुदेव ने जिस युग निर्माण योजना का सूत्रपात किया है, उसमें राष्ट्र-निर्माण भी एक अनिवार्य पड़ाव है।

राष्ट्र के नवनिर्माण से गुजरकर ही युग निर्माण की प्रक्रिया पूर्ण होती है। अत: गुरुकार्य के लिए समर्पित-संकल्पित सभी परिजनों को इस राष्ट्रीय पर्व को सार्थक बनाने वाली गतिविधियों में जुट जाना चाहिए।

हम राष्ट्र की आराधना तो करें, उसकी लोकतांत्रिक मर्यादाओं का पालन भी करें, परंतु इससे भी ज्यादा बड़ा पुरुषार्थ यह है कि चिंतन, चरित्र और भावों के रूपांतरण की दिशा में अग्रसर होने के लिए ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को प्रेरित कर सकें। यही हमारी ओर से अपने राष्ट्रीय महापर्व पर राष्ट्र के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ❑

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

साधनों से नहीं, साधना से मिलता है शाश्वत सुख

राजकुमार नीरव्रत का जीवन राजसी ऐशो-आराम से भरा-पूरा था और फिर नीरव्रत को सुख-वैभव, ऐशोआराम की कोई कमी भी क्यों होती? वे राजकुमार जो ठहरे! राजसी सुख-वैभव में पले नीरव्रत अब वयस्क हो चले थे, पर अपार राजसी सुख-वैभव का भोग करते हुए भी नीरव्रत का मन कभी-कभी खिन्न और उदास हो जाया करता था। एक दिन नीरव्रत विश्राम कर रहे थे तभी उनके मन में एक प्रश्न उठा।

"नीरव्रत! क्या तुमने कभी यह विचार किया है कि अपार सुख-वैभव के होते हुए भी, नानाविध भौतिक सुख-साधनों का भोग करते हुए भी तुम दु:खी और उदास क्यों हो?" नीरव्रत की अंतरात्मा ने कहा—"नहीं! इस पर विचार तो नहीं किया, पर रह-रहकर मन खिन्न और उदास तो अवश्य होता है।"

अंत:करण ने फिर कहा—"नीरव्रत! मन के खिन्न और उदास होने से यह बात तो स्पष्ट होती है कि भौतिक सुख-साधनों से शरीर को पुष्ट तो किया जा सकता है, पर मन की शांति और प्रफुल्लता भौतिक सुख-साधनों से नहीं पाई जा सकती। शाश्वत सुख, शांति, प्रफुल्लता, आत्मिक आह्लाद तो आत्मचिंतन, ब्रह्मचिंतन, ब्रह्मध्यान, ब्रह्मप्राप्ति, ब्रह्मसुख से ही संभव है।" उस दिन से तो नीरव्रत के मन में ये प्रश्न, ये विचार बार-बार उठने लगे। अंतत: अपने मन में उठ रहे प्रश्नों, विचारों और जिज्ञासाओं को लेकर राजकुमार नीरव्रत राजमहल से निकलकर महर्षि ऐलूष के आश्रम पहुँचे।

नीरव्रत के प्रश्नों और विचारों को सुनकर महर्षि ऐलूष बहुत प्रसन्न हुए और बोले—"राजकुमार! तुम्हारे मन में युवावस्था में ही ऐसे प्रश्न, ऐसे विचार उठ रहे हैं, यह अवश्य ही प्रभुकृपा और तुम्हारे पूर्वजन्मों के पुण्य संस्कारों का प्रतिफल है। यह सत्य है कि शाश्वत सुख-शांति, अपार वैभव व भौतिक साधनों से नहीं, वरन साधना से ही प्राप्त हो सकती है। तुम्हारे अंदर भौतिक सुख-साधनों के प्रति उदासीनता का भी यही कारण है। तुम में ब्रह्मसुख, ब्रह्मदर्शन पाने की उत्कंठा है, यह वास्तव में सराहनीय है।"

उन्होंने आगे कहा—"वत्स! जिसकी ब्रह्मदर्शन की जिज्ञासा जितनी प्रबल होती है, वह उतनी ही शीघ्रता से ब्रह्मदर्शन, ब्रह्मसुख, ब्रह्मानंद प्राप्त करता है। ब्रह्म ही क्यों वत्स! जिज्ञासा तो मनुष्य को किसी भी कला, किसी भी विधा में पारंगत बना देती है। जिज्ञासा मनुष्य को उसके परम लक्ष्य तक पहुँचा देती है। हमारा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। तुम आश्रम में रहो और तप करो, एक दिन तुम्हें निश्चित ही भगवान का साक्षात्कार होगा, और शाश्वत सुख-शांति प्राप्त होगी।"

यह कहकर महर्षि ऐलूष ने राजकुमार नीरव्रत की पीठ पर हाथ फेरा और सामान्य शिष्यों की तरह आश्रम के एक कक्ष में उनके रहने का प्रबंध कर दिया। जिनके हर छोटे-बड़े कार्य को करने के लिए, जिनकी सेवा के लिए सैकड़ों दास-दासियाँ, राजमहल में सदैव तत्पर रहते थे; उस नीरव्रत ने आज पहली बार अपना सामान अपने हाथों से उठाया।

'नारी सशक्तीकरण' वर्ष

आश्रम में रहते हुए नीरव्रत राजमहल के नानाविध सुस्वादु व्यंजनों की जगह सादा भोजन ग्रहण करने लगे। स्वर्णशय्या पर शयन करने वाले नीरव्रत जमीन पर आसन बिछाकर शयन करने लगे।

सूर्योदय के बाद तक सोते रहने वाले नीरव्रत गुरु–आज्ञा से ब्राह्ममुहूर्त में उठकर स्वयं ही पानी की व्यवस्था कर स्नानादि करते। ब्राह्ममुहूर्त में उठ कर तन–मन को स्वस्थ रखने के लिए कुछ आसन, प्राणायाम आदि का अभ्यास करते। तत्पश्चात वे गुरु द्वारा प्रदत्त गायत्री महामंत्र का जप करते हुए अपने हृदय में ब्रह्मस्वरूपा गायत्री का, ब्रह्म का, प्रातःकालीन उदीयमान सविता के प्रकाश पुंज के रूप में ध्यान करते।

जप, ध्यान के बाद वे आश्रम के अन्य विद्यार्थियों के साथ बैठकर यज्ञ करते। यज्ञ के पश्चात वेद, उपनिषद्, पुराण, गीता आदि सद्ग्रंथों का स्वाध्याय करते। तत्पश्चात कुछ अल्पाहार, फलाहार लेते। अभी नीरव्रत को आश्रम जीवन में रहकर साधना करते हुए कुछ ही महीने हुए थे सो अभी वे साधना की गहराई में तो नहीं उतर पाए थे। वे ध्यान की गहराई में भी नहीं उतर पाते थे।

अभी साधना में उनका मन पूर्णरूपेण नहीं लग पाया था। अभी उन्हें स्वयं के राजकुमार होने का एहसास अक्सर हुआ करता था। उनके अंदर का राजकुमार अभी जीवित था और उनकी साधना में विघ्न डाल रहा था। उन्हें राजमहल के सुख–वैभव की यादें भी आया करती थीं। मन अभी चंचल और चपल था जिससे उनका मन ध्यान में, साधना में नहीं रम रहा था। राजकुमार होने का अहं अभी भी उनके सिर चढ़कर बोल रहा था, जो उन्हें ध्यान की गहराई में उतरने नहीं दे रहा था।

महर्षि ऐलूष अपने इस नए शिष्य की अहंकार वाली समस्या से भली भाँति परिचित थे, सो उन्होंने राजकुमार नीरव्रत के न चाहते हुए भी उन्हें अपने अन्य शिष्यों की तरह नगर में जाकर भिक्षाटन करने का आदेश दिया। गुरु–आज्ञा से नीरव्रत को भी भिक्षापात्र लिए भिक्षाटन को निकलना पड़ा। राजकुमार नीरव्रत भिक्षापात्र लिए एक ग्राम में प्रविष्ट हुए।

किसी के द्वार पर जाते उन्हें काफी लज्जा आ रही थी। वे भिक्षापात्र लिए ग्राम–प्रमुख के दरवाजे पर पहुँचे और दस्तक दी। ग्राम–प्रमुख की कन्या विधा ने दरवाजा खोला और उसने भिक्षापात्र लिए नीरव्रत की लज्जा और संकोच को भाँप लिया। विधा ने एक मुट्ठी अन्न लिया और नीरव्रत के समीप ले जाकर भिक्षापात्र में डालने के बजाय भूमि पर गिरा दिया।

नीरव्रत ने विधा से पूछा—"भद्रे! यदि जान–बूझकर अन्न को फेंकना ही था, तो आप उसे लेकर यहाँ तक आई ही क्यों?" विधा ने हँसकर उत्तर दिया—"तात! मैं ही क्यों, संसार भी ऐसा करता है। संसार में आकर मनुष्य अपने लक्ष्य को कहाँ याद रखता है। हममें से भला कितने लोग मनुष्य जीवन का सदुपयोग कर पाते हैं। हमें अपने परम उद्देश्य को पूर्ण करते हुए भी कितनी लज्जा और संकोच होता है, क्या यह संकोच, यह लज्जा, अन्न को जमीन पर गिराने की तरह का ही अपराध नहीं हुआ?" यह सुनकर नीरव्रत की आँखें खुल गईं। उन्हें यह समझ में आ गया कि किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए दृढ़ता आवश्यक है।

उनकी लज्जा और उनका अहंभाव धुल गया और वे प्रसन्नतापूर्वक भिक्षाटन करते हुए आश्रम पहुँचे। नीरव्रत के प्रसन्न मुख को देखकर महर्षि ऐलूष भी प्रसन्न हो गए। ध्यान–साधना में नीरव्रत

का मन लगने लगा। यद्यपि अभी गहराई में उतरना उनके लिए शेष था, फिर भी साधना की नियमितता ने नीरव्रत पर अपना असर दिखाना प्रारंभ किया। मन पर साधना का असर होते ही नीरव्रत यह चिंतन करने लगे—"जब देह नष्ट हो जाती है, तब भी क्या राजा-रंक, स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, राजकुमार और सेवक का भेद रह जाता है, नहीं! बिलकुल नहीं!"

मन ने कहा—"नहीं! बिलकुल नहीं! जीवन के दृश्य भाग तब तक नश्वर हैं, क्षणिक हैं, असंतोषप्रद हैं, जब तक की मनुष्य पूर्णता को नहीं प्राप्त कर लेता।"

राजकुमार नीरव्रत ने जान लिया कि वे भी नश्वर शरीर नहीं, बल्कि शरीर में अभिव्यक्त, अव्यक्त आत्मा हैं और उसे पाने के लिए अहंभाव छोड़ना ही पड़ता है।

नित्य जप, ध्यान, स्वाध्याय के प्रभाव से नीरव्रत का चित्त धुलता गया। चित्त शुभ-अशुभ संस्कारों से मुक्त होता गया, निर्मल होता गया और निर्मल मन, निर्मल चित्त ब्रह्म के ध्यान में डूबने लगा।

मन सविता के दिव्य तेज का ध्यान करते-करते दिव्य तेज में ही विलीन हो गया और ध्यान के साथ चलने वाला गायत्री महामंत्र का जप भी प्रगाढ़ होने लगा।

जप करते हुए स्वयमेव ही उसका अर्थ चिंतन स्पष्ट होने लगा और नीरव्रत को ध्यान में गायत्री महामंत्र का अंतरिक्ष में प्रकाशवान स्वरूप में, ज्योतिर्मय स्वरूप में साक्षात्कार होने लगा। गायत्री महामंत्र का दर्शन उन्हें होने लगा।

अब ब्राह्ममुहूर्त व सायंकालीन संध्यावंदन, ब्रह्मध्यान हेतु जब नीरव्रत बैठते तो वे ध्यान में बिना किसी अवरोध के डूब जाते; क्योंकि अवरोध उत्पन्न करने वाले अहंभाव व संस्कार ही मिट गए। मन की चपलता, चंचलता, मलिनता पूरी तरह धुल गई, मिट गई। वे जप-ध्यान में बैठते ही शून्य की शांति में इस तरह खो जाते जैसे उनका बाह्य जीवन से संबंध ही न रहा हो।

उनकी इंद्रियाँ, उनका मन, उनकी संपूर्ण चेतना देह के अहंभाव से उठकर अनंत अंतरिक्ष में फैल गई थी, वे अब संकीर्ण परिधि से निकलकर अनंतता की अनुभूति कर रहे थे। अपने आप को निर्मल, स्वच्छ, धुला हुआ, शांत, संतुष्ट और बहुत हलका-फुलका अनुभव कर रहे थे; क्योंकि उन्हें अब अपने हृदय में अपनी आत्मा में ब्रह्मस्वरूपा, ब्रह्मरूप गायत्री की पल-पल अनुभूति होने लगी थी। सचमुच साधनों से नहीं, साधना से ही मिलता है सच्चा सुख, शाश्वत सुख। ❑

एक संत के पास एक धनी व्यक्ति मिलने के लिए पहुँचा और उनसे बोला—"महाराज! मैंने आपकी कथा सुनी, मैं बहुत प्रभावित हुआ। मैं आपको पाँच लाख रुपये देना चाहता हूँ, ताकि आप उससे एक नया मंदिर बना सकें।"

संत बोले—"बेटा! तू जिस नगर से आया है, मैं जब वहाँ कथा करने गया था तो मैंने वहाँ अनेक भूखे-प्यासे, गरीब लोग देखे। तू मंदिर बनाने की जगह उनके लिए कुछ कार्य कर। उसका पुण्य मंदिर बनाने से ज्यादा होगा।"

अपनी सृजनात्मक क्षमता कुछ ऐसे बढ़ाएँ

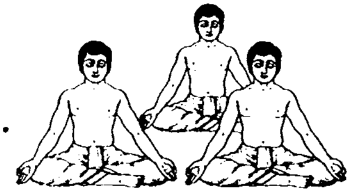

मनुष्य की सबसे बढ़ी सामर्थ्य उसकी सृजनात्मक क्षमता है। इसके बल पर वह कुछ भी नया रच सकता है, गढ़ सकता है और जीवंत कर सकता है। बस, उसके चाहने भर की देर है। शून्य से कुछ नया पैदा करने की सामर्थ्य सृजनात्मक शक्ति में है। समूची मानव जाति की सभ्यता-संस्कृति के विकास की कहानी वास्तव में इसी का ही चमत्कार है। निस्संदेह जीवन में सृजनात्मक शक्ति सर्वोपरि है।

सृजनात्मक व्यक्ति ही वास्तव में मानवीय जीवन को सार्थक करता है तथा इसका भरपूर आनंद उठा पाता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि सृजनात्मक व्यक्ति जिज्ञासा से भरा होता है, प्रयोगधर्मी होता है, जोखिम उठाता है, गलतियाँ करता है, उनसे सीखता है और विकसित होता है। व्यक्ति की सृजनात्मकता; अर्थहीन अस्तित्व को जीवंत करती है।

किसी ने सही कहा है कि जब आप कुछ सृजन कर रहे होते हैं, जो पहले नहीं था, तो जगत् अधिक अर्थपूर्ण लगता है, अधिक प्रकाशवान अनुभव होता है। सृजनात्मकता का अर्थ है, कुछ नया सृजन करना, जो पहले नहीं था।

वैज्ञानिक आइंस्टाइन के शब्दों में सृजनात्मकता एक नया सृजन है, जिसको सभी देखते तो हैं, लेकिन जिसके बारे में किसी ने सोचा नहीं था। सृजनात्मक व्यक्ति लीक से परे सोचने का साहस करता है। सेब सदियों से पेड़ से गिर रहा था, लेकिन न्यूटन को इसी घटना में प्रश्न कौंधा कि आखिर सेब नीचे ही क्यों गिरा और तभी गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत सामने आया।

जीवन में हर क्षेत्र में ऐसे प्रश्न ही सृजनात्मकता को अंजाम देते हैं। भारतीय ऋषियों के अस्तित्व को मथते प्रश्नों ने ही पिंड से लेकर ब्रह्मांड के रहस्य-सूत्रों को जन्म दिया, जिनको देखकर आज विश्व मनीषा चमत्कृत होती है। एक सामान्य व्यक्ति का जीवन भी रचनात्मकता के समावेश से नया अर्थ पाता है, गहन सार्थकता से भर जाता है। एक सृजनात्मक जीवन एक परिवर्धित जीवन होता है, एक व्यापकता लिए होता है, अधिक प्रसन्नता से भरा होता है, एक रोचक एवं रोमांचक जीवन होता है।

इस तरह सृजन के संग जीवन अधिक रुचिकर, आनंददायक एवं अर्थपूर्ण बनता है। सृजन के अभाव में जीवन नीरस, बोझिल, निराशा एवं अवसाद से भरा हुआ रह जाता है। जीवन में सृजनात्मक क्षमताएँ विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होती हैं; यथा कविता, कहानी, गीत, संगीत, नृत्य, पटकथा जैसे कलात्मक रूपों में। विज्ञान के आविष्कार एवं तकनीकी के नित-नूतन प्रारूप भी इसी सृजनात्मक शक्ति के प्रतिफल हैं। इसी तरह मानवीय जीवन की सर्वोत्कृष्ट संभावनाएँ; यथा धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य आदि भी इसी के गर्भ से प्रकट होते हैं।

सबसे बड़ी सृजनात्मक क्षमता है—अपने व्यक्तित्व को तराशना, अपनी चेतना का परिष्कार कर मानवीय संभावनाओं को इनके चरम तक विकसित करना। यही सबसे बड़ी कलात्मकता है और यही सबसे बड़ा आविष्कार भी। इसी के आधार पर नर-से-नारायण, जीव से शिव बनने की उक्ति देव संस्कृति में चरितार्थ होती रही है।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

नरपशु से नरमानव, महामानव और देवमानव बनने का पथ इसी आधार पर प्रशस्त होता रहा है। हर व्यक्ति में सृजनात्मक क्षमताएँ विद्यमान हैं, लेकिन इनकी अभिव्यक्ति के लिए कुछ विशेषताएँ भी अपेक्षित हैं, जो सृजन को समग्र रूप में संभव बना सकें। इन गुणों के अभाव में सृजन की संभावनाएँ भी सीमित हो जाती हैं। जिज्ञासा पहला गुण है। हमारे अध्यात्म शास्त्रों का प्रारंभ भी **अथातो ब्रह्म जिज्ञासा** से ही होता है।

इसी तरह जीवन के हर क्षेत्र में सृजन का प्रारंभ बिंदु यही है। इसके साथ सृजन के लिए संवेदनशीलता का होना अनिवार्य है। बिना इस सद्गुण के किया गया सृजन एकांगी ही होगा। इसके साथ व्यक्ति में खिलाड़ी भाव का होना भी आवश्यक है, जो जीवन के उतार-चढ़ाव एवं हार-जीत के मध्य स्थितप्रज्ञ रहकर अपने ध्येय की ओर बढ़ता रहे। इसके साथ मन का खुलापन भी महत्त्वपूर्ण है। खुले एवं ग्रहणशील मन में ही सृजनात्मक संभावनाएँ हिलोरें मारती हैं; जबकि संकीर्ण व आग्रहों से भरे मन में ये खिलने से पहले ही मुरझा जाती हैं।

इसी के साथ व्यक्तित्व में लचीलापन होना भी अभीष्ट है; क्योंकि कट्टरता सृजन में बाधक बनती है। फिर चिंतन की मौलिकता एवं स्वतंत्र सोच सृजनात्मकता का ठोस आधार है। ऐसे ही व्यक्ति विश्व को कुछ मौलिक एवं नूतन सृजनात्मक उपहार भेंट कर पाते हैं।

निस्संदेह रूप में साहस भी सृजनात्मकता का एक अनिवार्य गुण है। एक भीरु एवं कायर व्यक्ति साहस के अभाव में सही निर्णय नहीं ले पाता। फिर ऐसे में नूतन सृजन कैसे संभव है और एक सृजनात्मक व्यक्ति अंत:प्रेरणा से काम करता है, उसके तार हृदय से जुड़े होते हैं। साथ ही उसकी सोच में समग्रता होती है, अस्तित्व का हर पहलू इसमें समाया होता है।

निस्संदेह रूप में उपरोक्त गुणों के साथ कुछ कर गुजरने की महत्त्वाकांक्षा भी आवश्यक है और साथ ही निष्पक्ष भाव भी अपेक्षित है, जो राग-द्वेष से यथासंभव दूर रहता हो। एक सृजनात्मक व्यक्ति आदर्श रूप में पूरी विश्व मानवता का सर्वोपरि प्रतिनिधि होता है और आशा, उत्साह एवं ऊर्जा से भरा होता है।

इन गुणों से युक्त व्यक्ति सृजन की अपार संभावनाएँ लिए होता है। यदि इनमें से कुछ गुण भी विद्यमान हों तो व्यक्ति की सृजनात्मक क्षमताएँ बढ़ी-चढ़ी होती हैं और यदि व्यक्ति चाहे तो अपनी रचनात्मक क्षमताओं को बढ़ा सकता है। इस संदर्भ में कुछ सामान्य उपाय इस प्रकार से हैं।

सबसे पहले तो अपनी जिज्ञासा का भाव जगाए रखें और बीच-बीच में इसे धार देते रहें, जिसके लिए कई गतिविधियाँ सहायक हो सकती हैं, यथा खूब अध्ययन करें क्योंकि अध्ययन बुद्धि के कपाट खोलता है। स्वाध्याय के साथ सत्संग को अपनाएँ। प्रेरक लोगों के संग-साथ के सृजनात्मक प्रभाव को अनुभव करें। श्रेष्ठ संगीत का श्रवण भी इसमें प्रभावशाली रहता है। इसके साथ ही अपने कार्यस्थल को स्वच्छ, सुव्यवस्थित व सृजन के अनुकूल बनाएँ। सृजन में वातावरण का अपना महत्त्व रहता है।

नित्य कुछ समय एकांत में बैठें, ध्यान के लिए समय दें तथा सृजनात्मकता को नया आयाम दें। श्रेष्ठ फिल्मों का वाचन भी सृजनात्मक शक्ति में वृद्धि करता है, यह कल्पना शक्ति में पंख लगाता है और नए चिंतन एवं प्रेरणा का संचार करता है। ज्ञानवर्द्धक पॉडकास्ट सुनें, जो सृजनात्मकता के लिए ईंधन का काम कर सकते हैं।

इसके साथ शारीरिक रूप से सक्रिय रहें। शारीरिक श्रम, व्यायाम, भ्रमण आदि गतिविधियों से व्यक्ति के मस्तिष्क की सृजनात्मक क्षमताएँ संवर्द्धित होती हैं।

घूमने-फिरने से, नए देश एवं परिवेश में विचरण से भी मस्तिष्क की सृजनात्मक शक्तियाँ चैतन्य हो उठती हैं और सृजन की नई प्रेरणा मिलती है। इन सर्वसामान्य उपायों के साथ हर व्यक्ति अधिक सृजनात्मक जीवन जी सकता है और अंदर हिलोरें मार रही सृजन की अपार संभावनाओं को अपने पसंदीदा माध्यम से अभिव्यक्त करते हुए इसके अनगिनत अनुदानों को अनुभव कर सकता है। ❑

राजगृह में रौहिणेय नामक चोर के पिता ने मरते समय उससे कहा—''यदि तुम्हें अपने व्यवसाय में सफल होना है तो कथा-कीर्तन और साधुओं के उपदेश में मत जाना। ऐसे स्थान पर जाना ही पड़े तो कान बंद रखना।'' संयोग से रौहिणेय ने एक समय तीर्थंकर महावीर स्वामी को उपदेश देते देखा तो तुरंत अपने दोनों कानों में उँगली डाल लीं, परंतु उसी समय उसके पैर में काँटा चुभ गया। उसने एक हाथ से वह काँटा निकाला। इस बीच तीर्थंकर के उपदेश का यह अंश उसके कानों में पहुँच ही गया कि देवताओं के शरीर की छाया नहीं पड़ती। थोड़े दिनों बाद वह चोरी के अपराध में पकड़ा गया। राजकर्मचारियों ने छलपूर्वक उससे उसकी पहचान को उगलवाने की योजना बनाई। उन्होंने उसे औषधि देकर मूर्च्छित कर दिया और एक उपवन में रख आए।

रौहिणेय की मूर्च्छा जब दूर हुई तो वह अपने चारों ओर मणिजटित मंडप, अद्भुत वृक्ष और बहुमूल्य वस्त्राभूषणों से भूषित स्त्रियों को देखकर दंग रह गया। उन स्त्रियों ने उससे कहा—''आप स्वर्ग में हैं। धरती पर आप किस नाम से जाने जाते थे? देवलोक में झूठ बोलने पर आपको वापस पृथ्वी पर भेज दिया जाएगा।'' यह सुनकर रौहिणेय अपना परिचय देने ही जा रहा था कि उसे तीर्थंकर के वचन स्मरण हो आए। उसने देखा कि उन स्त्रियों के शरीर की छाया पड़ रही थी, जो कि यह सिद्ध करती है कि वह स्थान देवलोक नहीं था। रौहिणेय अपनी पहचान छिपाते वहाँ से बच निकला, पर इस घटना का उस पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसने सोचा कि जिस एक वाक्य से मुझे इतना लाभ हुआ, उन तीर्थंकर के चरणों में स्वयं को समर्पित करने पर स्वयं का भला कितना अधिक उपकार संभव हो सकता है। तत्क्षण ही संकल्पपूर्वक दुष्कर्मों को त्यागकर वह हितकारी प्रयोजनों में संलग्न हो गया।

महत्त्वपूर्ण है वर्तमान

महान रशियन साहित्यकार लियो टाल्स्टाय द्वारा रचित एक लोकप्रिय कहानी है—'तीन प्रश्न।' यह उस राजा की कहानी है, जो अपने मन में उठे 3 प्रश्नों के उत्तर खोज रहा था। उस राजा के मन में 3 प्रश्न उठे। राजा के मन में यह विचार भी आया कि यदि वह अपने मन में उठे तीन प्रश्नों के उत्तर खोज लेगा तो उसे कुछ और जानने की आवश्यकता ही नहीं रह जाएगी तो आखिरकार राजा के मन में उठे वे तीन प्रश्न क्या थे, जिनके उत्तर पाने को वह बेचैन था?

पहला प्रश्न था—सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य क्या है? दूसरा प्रश्न था—सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति कौन है और तीसरा प्रश्न था—किसी भी कार्य को करने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण अथवा उपयुक्त समय कौन-सा है? उपरोक्त तीनों प्रश्नों के उत्तर देने वालों के लिए राजा ने किसी बड़े पुरस्कार की घोषणा भी कर दी।

पुरस्कार पाने की लालसा लिए बहुत से लोग राजमहल आए और उन तीनों प्रश्नों के उत्तर दिए। सबने उन तीन प्रश्नों के अलग-अलग उत्तर दिए, पर राजा किसी के उत्तर से संतुष्ट नहीं हुआ। सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य क्या है? इस प्रश्न के उत्तर में किसी ने कहा कि विज्ञान का अध्ययन सबसे महत्त्वपूर्ण है, तो किसी ने राज्य के विस्तार को सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य बताया तो किसी ने धर्मग्रंथों के पारायण को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और सर्वश्रेष्ठ कहा तो किसी और ने कहा कि सैन्य कौशल में निपुणता होना ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति कौन है? इस प्रश्न के उत्तर में किसी ने कहा कि राजा के लिए उसी के समान कोई दूसरा राजा सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है। किसी ने कहा कि राजा को विज्ञजनों की एक समिति का निर्माण करना चाहिए, जो हर विषय को परखने के बाद राजा को यह बताए कि उसे कब-क्या करना है।

किसी ने कहा कि राजा को कुछ मामलों में त्वरित निर्णय लेने होते हैं और परामर्श के लिए अधिक समय नहीं होता, इसलिए राजा के लिए कोई अच्छा सलाहकार, परामर्शदाता होना चाहिए जो उसे किसी भी विषय पर त्वरित सलाह-परामर्श दे सके। राजा के लिए तो कोई अच्छा सलाहकार, परामर्शदाता ही सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है। किसी ने कहा कि ज्योतिषियों और भविष्यवक्ताओं की सहायता से राजा किसी भी घटना का पूर्वानुमान लगा सकता है, इसलिए ज्योतिषी और भविष्यवक्ता ही राजा के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो सकते हैं।

किसी ने कहा कि राजा को प्रशासकों में अपना पूरा विश्वास रखना चाहिए। किसी ने राजा से पुरोहितों और संन्यासियों में आस्था रखने के लिए कहा। किसी ने कहा कि चिकित्सकों पर सदैव ही भरोसा रखना चाहिए तो किसी ने योद्धाओं को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बताते हुए राजा को उन पर विश्वास करने के लिए कहा। सबसे महत्त्वपूर्ण समय क्या है? किसी भी कार्य को करने का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और उपयुक्त समय क्या है?

इस प्रश्न के उत्तर में किसी ने कहा कि सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और उपयुक्त समय की जानकारी पाने के लिए राजा को किसी ज्योतिषी या भविष्यवक्ता से सलाह लेनी चाहिए।

किसी ने कहा कि राजा को एक समय-तालिका बना लेनी चाहिए और उसमें हर कार्य के लिए एक निश्चित समय नियत कर लेना चाहिए, तभी हर काम अपने सही समय पर हो पाएगा। किसी ने सुझाव दिया कि राजा को हर काम समय से पूर्व ही कर लेना चाहिए।

इस प्रकार सबने तीनों प्रश्नों के अलग-अलग उत्तर दिए, पर राजा किसी के उत्तर से संतुष्ट नहीं हुआ। राजा ने अपने प्रश्नों के संतोषजनक उत्तर पाने के लिए अपने सभासदों और मंत्रियों की बैठक भी बुलाई और उन तीन प्रश्नों के उत्तर पर विचार-विमर्श किया, पर फिर भी राजा संतुष्ट नहीं हुआ।

अंततः कुछ दिनों तक चिंतन-मनन करने के बाद राजा ने एक महात्मा के दर्शन करने का निश्चय किया। वे महात्मा जंगल से घिरे एक पर्वत के ऊपर एक कुटिया में रहते थे और सभी उन्हें परम ज्ञानी मानते थे। राजा को यह पता चला कि वे महात्मा पर्वत से नीचे कभी नहीं आते और वे राजसी व्यक्तियों से नहीं मिलते। इसलिए राजा ने एक साधारण किसान का वेश धारण किया और अपने सेवकों के साथ महात्मा जी की कुटिया की ओर चल पड़ा।

महात्मा की कुटिया के निकट पहुँचने पर राजा अपने साथ सुरक्षा के लिए आए गुप्तचरों, सैनिकों और सेवकों को जंगल में ही छोड़कर एवं वहीं उन्हें अपने लौटने तक इंतजार करने को कह कर अकेले ही महात्मा से मिलने चल पड़ा। महात्मा की कुटिया तक पहुँचते ही राजा ने देखा कि वे महात्मा अपनी कुटिया के सामने बने छोटे से बगीचे में फावड़े से खुदाई कर रहे थे। महात्मा को खेत में कुदाल चलाते देख राजा चुपचाप खड़ा होकर देखने लगा।

महात्मा वृद्ध हो चले थे और हाँफते हुए जमीन पर कुदाल चला रहे थे। उस अवस्था में बगीचे में काम करना, कुदाल चलाना उनके लिए कुछ कठिन था, पर फिर भी वे बड़े मनोयोग और प्रसन्नतापूर्वक अपने काम में लगे थे। कुछ देर बाद जब महात्मा ने दृष्टि उठाई तो उन्होंने राजा से आने का कारण पूछा।

राजा ने उन्हें नमस्कार किया और उनके समक्ष अपने तीनों प्रश्नों को रखा। महात्मा ने राजा के प्रश्नों को ध्यान से सुना और उसके कंधे को थपथपाया और फिर कुदाल चलाते रहे, काम करते रहे। राजा ने कहा—"आप थक गए होंगे। लाइए मैं आपका हाथ-बँटा देता हूँ।" महात्मा ने धन्यवाद कहते हुए राजा को अपनी कुदाल दे दी और स्वयं एक पेड़ के नीचे विश्राम के लिए बैठ गए। राजा ने कुदाल लेकर खेत जोतना आरंभ किया। दो क्यारियाँ खोदने के बाद राजा ने महात्मा की ओर देखा और फिर से वे तीनों प्रश्न दोहराए।

महात्मा ने राजा के प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया और उठते हुए कहा—"अब तुम थोड़ी देर आराम करो और मैं बगीचे में काम करूँगा, लेकिन राजा ने खुदाई करना जारी रखा। 1 घंटा बीत गया, फिर दो घंटे। शाम होने को आई। फिर राजा ने कुदाल रख दिया और महात्मा से पुनः अपने प्रश्नों का उत्तर देने का आग्रह किया। महात्मा ने राजा से कहा—"क्या तुम्हें किसी के दौड़ने की आवाज सुनाई दे रही है?"

राजा ने देखा कि पेड़ों के झुरमुट से एक व्यक्ति दौड़ता हुआ महात्मा जी की कुटिया की ओर आ रहा है। वह व्यक्ति अपने पेट में लगे घाव को अपने हाथ से दबाए हुए था। घाव से बहुत खून बह रहा था। वह महात्मा जी के पास पहुँचते ही भूमि पर गिर पड़ा और अचेत हो गया। राजा और महात्मा ने देखा कि उसके पेट में किसी शस्त्र से गहरा वार किया गया था।

दोनों ने मिलकर उसके घाव को साफ किया। घाव पर मरहम लगाया। राजा ने अपने वस्त्र को

फाड़कर उसके घाव पर बाँधा, ताकि खून बहना बंद हो जाए। मरहम-पट्टी से उस घायल व्यक्ति को बहुत राहत मिली। कुछ समय बाद उसे होश आया और उसने पानी माँगा। राजा दौड़कर उसके लिए पानी लाया। तब तक सूर्यास्त हो चुका था और वातावरण में ठंढक आने लगी थी। राजा और महात्मा ने घायल व्यक्ति को उठाया और उसे कुटिया के अंदर बिस्तर पर लिटा दिया।

वह आँखें बंद करके चुप-चाप लेटा रहा। राजा भी पहाड़ चढ़ने और बगीचे में काम करने के बाद थक चुका था। वह भी कुटिया के द्वार पर बैठ गया और उसे नींद आ गई। सुबह जब उसकी आँखें खुलीं तो सूर्योदय हो चला था और सूर्य की स्वर्णिम रश्मियों से नहाकर पर्वत भी दिव्य आलोक से आलोकित हो उठा था। एक पल के लिए तो वह भूल ही गया कि वह कहाँ है और वहाँ क्यों आया है। उसने कुटिया के भीतर बिस्तर पर दृष्टि डाली। घायल व्यक्ति अपने चारों ओर बड़े विस्मय से देख रहा था। जब उसने राजा को देखा तो वह बहुत ही महीन स्वर में बुदबुदाते हुए बोला—''महाराज! आप मुझे क्षमा कर दीजिए।'' ''तुमने किया क्या है और मुझसे क्षमा क्यों माँग रहे हो?''—राजा ने उससे पूछा?

''आप मुझे नहीं जानते, पर मैं आपको जानता हूँ। मैं किसी समय आपका घोर शत्रु था। आपने मेरे भाई को फाँसी दे दी थी। तभी मैंने आपकी हत्या करने की प्रतिज्ञा की थी। आपने मेरी संपत्ति भी ले ली थी। जब मुझे पता चला कि आप इस पर्वत पर महात्मा से मिलने के लिए अकेले आ रहे हैं तो मैंने आपकी हत्या करने की योजना बनाई। मैं छिपकर आपके लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था, पर आपके सैनिकों और सेवकों ने मुझे देख लिया। वे मुझे पहचान गए और मुझ पर प्रहार कर दिया। मैं अपने बचाव के लिए भागता हुआ यहाँ आ गया और आपके सामने गिर पड़ा। मैं आपकी हत्या को उद्यत था, पर आपने मेरे जीवन की रक्षा की। मैं बहुत शरमिंदा हूँ। मुझे समझ नहीं आ रहा कि मैं आपके इस उपकार का बदला कैसे चुका पाऊँगा? मैं जीवनपर्यंत आपकी सेवा करूँगा और मेरी संतानें भी सदैव आपके कुल की सेवा करेंगी। कृपया मुझे क्षमा कर दें।''—घायल व्यक्ति ने कहा।

राजा यह जानकर बहुत हर्षित हुआ कि उसके शत्रु का हृदय परिवर्तन हो गया और उसका रूपांतरण हो गया। उसने न केवल उसे क्षमा कर दिया, बल्कि उसे उसकी संपत्ति लौटाने का वचन भी दिया और उसकी सही व पूर्ण चिकित्सा के लिए अपने सेवक के माध्यम से अपने निजी चिकित्सक को वहाँ बुला लिया।

इस घटना ने राजा को भी रूपांतरित कर दिया। वह इस घटना को अप्रत्याशित ईश्वरीय सहयोग मानकर मन-ही-मन ईश्वर को धन्यवाद देने लगा और तब राजा ने पुनः महात्मा जी को अपने तीनों प्रश्नों की याद दिलाई और उनके उत्तर देने का आग्रह किया, ताकि वह शीघ्र राजमहल वापस जा सके। उस समय महात्मा जी पिछले दिन खोदी गई क्यारियों में बीज बो रहे थे।

महात्मा जी ने मुस्कराते हुए कहा—''राजन्! क्या अब भी आपको उन प्रश्नों के उत्तर नहीं मिले?'' राजा को मौन देखकर उन्होंने अपनी बात आगे बढ़ाई और कहा—''आपके सभी प्रश्नों के उत्तर तो दिए जा चुके हैं।'' ''वह कैसे?''—राजा ने चकित होकर कहा।

महात्मा जी बोले—''सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य वह है, जो सामने है। सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति वह है, जो हमारे पास है और सबसे महत्त्वपूर्ण व उपयुक्त समय अभी है अर्थात वर्तमान समय ही सबसे महत्त्वपूर्ण व उपयुक्त है।'' फिर राजा को सविस्तार समझाते हुए महात्मा जी बोले—''राजन्! यदि कल आप मेरी वृद्धावस्था का ध्यान करके

बगीचे में कार्य करने में मेरी सहायता नहीं करते, सहानुभूति नहीं दिखाते तथा तुरंत चले जाते तो आप वापसी में घात लगाकर बैठे हुए शत्रु का शिकार हो जाते और आपकी जीवन-रक्षा संभव नहीं हो पाती। सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य वही था, जो आपने मेरी सहायता के रूप में किया। दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य उस घायल आगंतुक की रक्षा करना था, जो आपने किया। आप उस समय यहाँ आकर जिस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति से मिले, वह मैं ही था। और आपका सबसे आवश्यक कार्य था मेरी सहायता करना।

"सबसे महत्त्वपूर्ण समय भी वही था, जिसके सदुपयोग से आपने मेरी सहायता की और उस घायल व्यक्ति की सेवा कर आपने एक शत्रु को भी मित्र में बदल दिया। यदि आप उस घायल व्यक्ति की सेवा नहीं करते तो रक्तस्राव के कारण उसकी मृत्यु हो जाती। तब आपके और उसके मध्य मेल-मिलाप नहीं हो पाता।

"अत: उस क्षण वह व्यक्ति सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति था और उसकी सेवा-शुश्रूषा करना सबसे आवश्यक व महत्त्वपूर्ण कार्य था। जिस समय आपने मेरी सहायता की और उस घायल व्यक्ति की सेवा की वह समय ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और उपयुक्त समय था।"

महात्मा जी ने फिर कहा—"राजन्! स्मरण रहे, केवल एक ही समय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है और वह समय यही है, वह समय वर्तमान समय ही है। वर्तमान क्षण ही है। इसी का प्रभुत्व है। इस वर्तमान समय का सदुपयोग कर लिया जाए तो वर्तमान सुंदर हो जाता है और यदि वर्तमान सुंदर हो जाता है तो व्यक्ति का भविष्य तो सुंदर होगा ही। इसलिए वर्तमान समय के हर पल का सदुपयोग करना चाहिए।"

महात्मा जी ने आगे कहा—"सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति भी वही है, जो आपके समीप है, आपके पास है, आपके समक्ष है, क्योंकि हम नहीं जानते कि अगले क्षण हम किसी अन्य व्यक्ति से व्यवहार करने के लिए जीवित रहेंगे भी या नहीं और सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण कार्य वही है, जो वर्तमान में आपके समक्ष है, आपके सामने है और आपके द्वारा किया जाना है।

"इसलिए हर कार्य को महत्त्वपूर्ण मानकर उसे तन-मन-प्राण की पूरी शक्ति लगाकर तन्मयता और कुशलतापूर्वक करना चाहिए। इससे हर कार्य में सफलता मिलती है। आपके समक्ष, आपके पास जो उपस्थित लोग हैं, उनके जीवन को सुख और शांति से भर देने का प्रयास करें; क्योंकि यही मानव जीवन का उद्देश्य है।"

राजा के तीनों प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर मिल गया और राजा संतुष्ट होकर प्रसन्नतापूर्वक वहाँ से राजमहल की ओर चल पड़ा। उपरोक्त कहानी के तीनों प्रश्नों के उत्तरों में महत्त्वपूर्ण प्रेरणाएँ समाहित हैं। महत्त्वपूर्ण कार्य, महत्त्वपूर्ण व्यक्ति एवं महत्त्वपूर्ण समय की कल्पना अधिकांश लोग करते हैं तथा भविष्य की ओर दृष्टि गड़ाए रहते हैं; जबकि सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वर्तमान ही है।

यदि वर्तमान का सदुपयोग कर लिया जाए एवं वर्तमान प्रस्तुत कार्य को कुशलतापूर्वक कर लिया जाए तो वर्तमान और भविष्य, दोनों ही उज्ज्वल हो सकते हैं। ❑

जीवनं देवता नूनं प्रत्यक्षं तस्य लभ्यते।
अभ्यर्थनाभिरेतत्सत्परिणामपरंपरा॥

अर्थात जीवन ही प्रत्यक्ष देवता है। उसकी अभ्यर्थना करने से हाथोंहाथ सत्परिणामों की प्राप्ति होती है। जीवन को ईश्वर का उपहार नहीं, प्रतिनिधि कहा गया है। जीवन-साधना से ही ईश्वर-साधना सधती है, उसी के प्रतिफल सामान्य-असामान्य बनाते हैं।

पावन योजना है गृहस्थ धर्म

जिसे हम गृहस्थ जीवन कहते हैं, वह एक अत्यंत ही पावन योजना है। उसमें मनुष्य के कल्याण का विषय अधिक जागरूकता से निभ पाता है। इसे इस प्रकार समझा जाए कि आबादी बढ़ाने की दृष्टि से नहीं, बल्कि समाज को एक संगठित रूप देने, नए मानवों के निर्माण करने के लिए गृहस्थ धर्म की आवश्यकता पड़ती है।

हमारे पूर्वज इसे मानव सभ्यता का अनिवार्य अंग मानते थे एवं कहते थे कि यह हमारी पीढ़ी को सुसंस्कृत करने का साधन है। इसमें निहित तत्त्व मानव को त्याग का संदेश देते हैं, उसे देश-धर्म-संस्कृति के प्रति अधिक जागरूक कर उसे एक जिम्मेदार नागरिक बनाने हेतु प्रेरित करते हैं, परंतु यह अभिकल्पना तभी सार्थक है, जब वास्तव में गृहस्थ धर्म के सुचारु रूप से परिपालन को महत्त्व दिया जाए।

गृहस्थ क्या है ? दो परिवारों का मिलन। किस उद्देश्य से ? ताकि एक नई पीढ़ी के सृजन में योगदान मिल सके, परंतु किस हेतु ? श्रेष्ठ आत्माओं के धरती पर अवतरण के कारणरूप। ऐसा इसलिए; क्योंकि यह समाज ईश्वरनिर्दिष्ट कार्यक्रम पर तभी चल पाएगा, जब इसे सुयोग्य एवं उच्च कोटि की प्रतिभा से युक्त मनुष्यों का समूह मिले।

यही गृहस्थ की परंपरा का आधार है, परंतु हमने इसे क्या बना दिया। हमारे लिए गृहस्थ का अर्थ होता है परिवार बढ़ाना, अपनी सुख-सुविधाओं की खातिर समाज के व्यापक वर्ग की अनदेखी करना। अपने आप को पूर्ण रूप से अपने एकाकी परिवार को समर्पित कर देना, परंतु विश्व-परिवार हेतु अपने कर्त्तव्यों की पूर्ति न करना।

यही है आज का गृहस्थ जीवन, इसमें दुराचार और असंगत नीति-व्यवहार को भी जोड़ लीजिए, जिसमें कि व्यक्ति तुच्छ-सा आचरण करता हुआ अपने जीवन को नरक की विभीषिका में जा धकेलता है। क्या यही गृहस्थ का प्रयोजन है, क्या हमारे पूर्वज यही सिखाकर गए ? नहीं ! हमने गृहस्थ को ठीक से नहीं समझा, हमने उसके महान उद्देश्य के प्रति लापरवाही बरती।

गृहस्थ क्या था और क्या हो गया, ऋषि-मुनियों द्वारा आरोपित व्यवस्था का सत्यानाश कर हम पतन के भागी तो बने और उत्थानपरक दृष्टिकोण के अवलंबन हेतु हम कोई सार्थक पहल न कर पाए।

हमारा जीवन तभी महान बनता है, जब गृहस्थ के आदर्शों को हम अपना पाते हैं, उसे अपनी उन्नति का साधन बना अपने को पवित्र कार्यों एवं उद्देश्यनिष्ठ प्रयोजनों हेतु समर्पित कर पाते हैं। गृहस्थ क्या है ? मानवीय व्यवहार की रूपरेखा, जिसमें कि व्यक्ति को समाज के साथ आदान-प्रदान का अवसर मिलता है। व्यक्ति अपने एकांगीपन से दूर हटकर स्वयं को कर्त्तव्यनिष्ठ बुद्धि के साथ श्रेष्ठ कार्यों हेतु समर्पित करता है।

ऐसा कर वह अपने में संतोष का अनुभव करता है एवं दूसरों की उन्नति में सहायक बन एक श्रेष्ठ समाज के गठन में सहभागी होता है। गृहस्थ एक पावन कृत्य है—यदि उसकी महत्ता एवं स्वरूप

पर प्रकाश पड़ सके, परंतु इसके लिए ऐसे लोगों का होना भी तो अनिवार्य है, जो विवेक-बुद्धि से सोचें, कर्त्तव्य की दृष्टि से व्यवहार करें एवं अपने को समाज के हित-प्रयोजन में लगाएँ भी।

जो लोग इसके लायक होते हैं, वे इसे आदर्श व्यवहार का पात्र बना एक श्रेष्ठ जीवन जीकर जाते हैं। जो नहीं, वे अपने आप को भारस्वरूप इस पृथ्वी पर लादते भर हैं। जिन्हें विवाह नहीं करना चाहिए, उनमें से अधिकांश विवाह किए बैठे हैं। विवाह की उपयोगिता तभी सिद्ध होती है, जब यह मनुष्य को उसके मूल वैभव से परिचित कराए। जो कि इतना ही है कि मनुष्य सारे संसार के कल्याण की सोचे एवं तदनुसार नीति अपनाए। उसे व्यक्तिगत हित से अधिक समष्टि सत्ता का भान रहे एवं उसका जीवन श्रेष्ठ आदर्शों की पूर्तिस्वरूप लघु से महान बनता जाए।

ऐसा जीवन ही जीने योग्य है, जो कि स्वयं से अधिक जगती के हितार्थ नियोजित हो। इसके अतिरिक्त गृहस्थ परंपरा हमें यह भी सिखाती है कि हम एक बनकर रहें। चाहे जो कुछ हो, हमारे बीच का प्रेम एवं सहकार सदा बना रहे एवं हम जीवन के उज्ज्वल पथ पर पूर्ण गति से बढ़ते रहें। यही गृहस्थ धर्म की विशेषता है।

इसके अतिरिक्त जो नीति-व्यवहार पुरुष और स्त्री के मध्य होता है, वह अपने आप में सुसंतुलित हो एवं उसके द्वारा संतति-निर्माण एवं अन्यों को परस्पर अनुग्रह का लाभ मिल सके।

यही आदर्श गृहस्थ जीवन की परिकल्पना है। हम इस पर खरे उतरें, इसके लिए यह आवश्यक है कि हमारे मन में गृहस्थ के पुण्य-प्रयोजन के प्रति आदर एवं सम्मान हो, हम सभी को समान दृष्टि से देखें एवं लोक-कल्याणमय दृष्टिकोण अपनाकर अपने को इस धरती एवं संपूर्ण मानव समाज के ऋण से मुक्त करें।

यहाँ वासना का आधिक्य न होने पाए, स्त्री-पुरुष के प्रति हमारी ममता एवं करुणा झलके, प्रेम से अपना जीवन बसाएँ तथा दूसरों को अनुग्रह का पात्र बनाएँ। यही गृहस्थ परंपरा है एवं इसकी सम्माननीय स्थिति तभी है, जब हम जिम्मेदारीपूर्वक इसके निर्वहन को कदम बढ़ाएँ।

हमारे परिवार टूटते-बिखरते तभी हैं, जब हम एकदूसरे के प्रति अपने प्रेम को अभिव्यक्त नहीं करते, वरन स्वयं में रहते हैं, परंतु आत्मोत्कर्ष की दिव्य भावना को प्रश्रय नहीं देते। हमारे महान पूर्वज कहते हैं कि गृहस्थ जीवन सफल तभी है, जब उसे किसी आदर्श सुपात्र द्वारा पूर्ण निश्चिंतता से निबाहने की सोची जाए, उसे अपने व्यक्तिगत हित से बढ़कर श्रेष्ठ समाज के गठन का माध्यम बनाया जाए एवं गृहस्थ जीवन के नियमों द्वारा पवित्र एवं महान जीवन जीने की सोची जाए। ❑

जो उच्च विचारों को पढ़ते हैं, पर उन्हें गले से नीचे नहीं उतारते हैं, उन्हें व्यावहारिक जीवन में स्थान नहीं देना चाहते, ऐसे लोगों से कोई बड़ी आशा किस प्रकार से की जाए?

हमें कर्मठ और प्रबुद्ध साथी चाहिए—ऐसे जो युग निर्माण की भूमिका प्रस्तुत करने के लिए अपने तुच्छ स्वार्थों की उपेक्षा, अवहेलना कर सकें, जो निजी समस्याओं में उलझे रहकर ही जिंदगी व्यतीत कर डालने की व्यर्थता को समझ सकें और भारतीय आदर्शों के लिए कुछ त्याग और बलिदान की साध अपने भी सँजो सकें।

—परमपूज्य गुरुदेव

अनसुनी न करें अंत:करण की आवाज

एक कर्त्तव्यनिष्ठ राजा के रूप में अरिष्टनेमि की ख्याति थी। जीवन भर अपने कर्त्तव्यों का भली प्रकार पालन करते हुए अरिष्टनेमि अब जीवन के तीसरे वय में प्रविष्ट हो चुके थे। अब तक अपने पारिवारिक व राजनीतिक दायित्वों का निर्वाह उन्होंने बड़े ही मनोयोग से किया था, पर इधर कुछ दिनों से न जाने क्यों उनके अंत:करण में कुछ हलचल-सी होने लगी थी।

कर्त्तव्यपालन के संतोष की शीतलता के साथ-साथ उन्हें कुछ आकुलता की अनुभूति भी होने लगी थी, पर यह आकुलता उनमें आई ही क्यों और कैसे? यह उनकी समझ से परे था। अस्तु राजा ने अपने कुलगुरु के समक्ष अपनी समस्या रखी।

राजा की समस्या सुनकर राजगुरु मुस्कराए और बोले—"राजन्! मनुष्य के जीवन में कई बार ऐसे अवसर आते हैं, जब अपने कर्त्तव्यों व दायित्वों का भली प्रकार निर्वाह करते हुए भी उसके मन में हलचल व कुतूहल-सा अनुभव होता है। ऐसा होना स्वाभाविक है।

"यह दरअसल शरीर की बदलती हुई अवस्था के साथ जीवन के अगले चरण में प्रवेश अथवा आत्मकल्याण, मोक्ष, मुक्ति, भगवत्प्राप्ति जैसे जीवन के परम लक्ष्य की ओर बढ़ने हेतु आत्मा के संकेत की एक प्रतिक्रिया है।" "पर आत्मा का यह कैसा संकेत है गुरुदेव?"—राजा ने पूछा।

कुलगुरु बोले—"राजन्! अब तक आप अपनी शारीरिक व मानसिक शक्ति से अपने लौकिक कर्त्तव्यों को पूर्ण करते रहे। यह अत्यंत सराहनीय है, पर स्वयं को लौकिक कर्त्तव्यों की पूर्ति तक सीमित कर लेना उचित नहीं है; क्योंकि लौकिक कर्त्तव्यों को पूरा करने के साथ-साथ जीवन के परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होकर जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर लेना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है। अब आपको आत्मिक शक्तियों के विकास हेतु उच्च आध्यात्मिक साधनाएँ भी करनी चाहिए। अब अंत:करण आपको उच्च आध्यात्मिक साधनाओं के द्वारा जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर लेने के संकेत दे रहा है। आपको आत्मविकास की तपोमय व आध्यात्मिक साधना का निमंत्रण मिल रहा है। वत्स! अपने सुसंस्कारों के कारण ही अपने अंत:करण के संकेत आप अनुभव कर सके हैं। अपने अंत:करण के संकेत की अनसुनी न करें। अब आपको अविलंब आध्यात्मिक साधना हेतु तत्पर हो जाना चाहिए।"

अपने कुलगुरु से अमृतोपम उपदेश पाकर राजा तृप्त हुए और समस्त राजकर्म अपने पुत्र को सौंपकर स्वयं विधिवत् वानप्रस्थ ग्रहण कर गंधमादन पर्वत पर तपस्या करने चले गए। वे अपने कुलगुरु से प्राप्त गायत्री महामंत्र व इष्टदेव के मंत्र का विधिवत् जाप व ध्यान करने लगे।

प्रारंभ में चित्त में संचित शुभ-अशुभ, अच्छे-बुरे, पाप-पुण्य आदि कर्मों के संस्कारों के कारण चित्त की चपलता, चंचलता ने उन्हें बहुत भरमाया, भटकाया व लक्ष्य से विमुख किया, पर फिर भी उन्होंने साधना नहीं छोड़ी। वे धैर्यपूर्वक पूर्ण मनोयोग से साधना करते रहे।

इस प्रकार श्रद्धा, विश्वास व संयमपूर्वक साधना करते हुए वर्षों बीत गए। नियमित और दीर्घ काल तक साधना करते रहने से चित्त संस्कारों से शून्य होता गया, मन की मलिनता मिटती गई, धुल गई। फलस्वरूप चित्त की चपलता, चंचलता भी जाती रही और उनका मन भगवद्ध्यान, मंत्र-जाप में रमने लगा, डूबने लगा।

मन अपनी उछल-कूद करके थक गया, प्रकृति उनकी परीक्षा लेकर संतुष्ट हो गई, मन अनुगामी बन गया, प्रकृति अनुकूल व सहयोगिनी बन गई। फलस्वरूप राजा को अब आत्मशांति की शीतलता का अनुभव होने लगा। तभी एक दिन एक देवदूत उनके सामने आ उपस्थित हुआ और बोला— ''देवराज इंद्र ने आपको ससम्मान मिलने के लिए बुलाया है।''

देवराज इंद्र ने बुलाया है यह जानकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ—''भला मुझे क्यों बुलाया है?'' अपनी साधना को छोड़कर जाने की उनकी इच्छा तो न थी, पर कोई प्रेम से बुलाए तो तिरस्कार भी तो उचित नहीं। ऐसा सोचकर राजा शांत भाव से उस दूत के साथ चल पड़े। स्वर्ग के स्वामी देवराज इंद्र ने राजा का स्वागत किया और अपने निकट बिठाकर चर्चा प्रारंभ की।

वे बोले—''राजन्! आपकी तपस्या व सत्कर्मों ने आपको स्वर्ग का अधिकारी बना दिया है। आप चाहें तो यहाँ दीर्घकाल तक रहकर स्वर्ग-सुख का उपभोग कर सकते हैं।'' ''पर मैंने तो स्वर्ग-सुख पाने की कामना से कोई कर्म अथवा तप किया ही नहीं है, फिर उस पर मेरा अधिकार कैसे सिद्ध हुआ?''—राजा बोले। तब देवराज बोले—''यह सत्य है कि आपने स्वर्ग-सुख पाने की कामना से तप नहीं किया है, पर आपकी तपस्या के फलस्वरूप आपको स्वर्ग-सुख प्राप्त हो सकता है।''

राजा ने प्रश्न किया—''मुझे स्वर्ग के विषय में कोई जानकारी ही नहीं है, फिर मैं स्वर्ग-सुख को स्वीकार करने या नहीं करने के विषय में आपको कुछ कैसे कह सकता हूँ? क्या मुझे अपनी संचित तप की पूँजी के मूल्य पर स्वर्ग-सुख खरीदना होगा? क्या स्वर्ग में अधिकांश व्यक्ति मेरी ही तरह के हैं, जिन्हें स्वर्ग की प्राप्ति अनायास हुई है अथवा स्वर्ग-सुख की लालसा से एकत्र हुए व्यक्ति ही वहाँ हैं? और स्वर्ग-सुख और स्वर्ग-निवास की सीमा क्या है? क्या मैं अपनी जगह किसी अन्य को स्वर्ग-सुख का अधिकारी बना सकता हूँ?''

राजा के सारगर्भित प्रश्नों को सुनकर देवराज मुस्कराए और बोले—''राजन्! स्वर्ग के उच्च और निम्न स्तर सुकर्मों की पूँजी से प्राप्त होते हैं। अधिकांश स्वर्गवासी स्वर्ग-सुख की लालसा से आने वाले ही हैं। उच्च वर्ग के प्रति ईर्ष्या, हेय के प्रति स्पर्धा का भाव स्वर्ग में भी है। अपने हिस्से का भोग भोगने की ही स्वतंत्रता है, उसे किसी को देने की सुविधा नहीं है। सत्कर्मों का प्रभाव समाप्त हो जाने पर अर्थात सत्कर्मों की पूँजी समाप्त हो जाने पर व्यक्ति को संसार चक्र में पुनः वापस लौट आना अनिवार्य होता है।''

स्वर्ग-सुख की सीमाएँ और स्वर्ग-सुख भोगकर पुनः संसार व जीवन-मरण के चक्र में पड़े रहने की सच्चाई को जानकर राजा अरिष्टनेमि का हृदय दहल गया। वे बोल पड़े—''जहाँ शाश्वत सुख, शांति, जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति व भगवत्प्राप्ति संभव नहीं, भला वह स्वर्ग मेरे किस काम का?'' देवराज तो राजा की परीक्षा लेने हेतु उनके मनोभाव पढ़ रहे थे। उनमें जीवन के परम लक्ष्य अर्थात भगवत्प्राप्ति के प्रति अटूट निष्ठा को देखकर देवराज बड़े प्रभावित हुए।

राजा अरिष्टनेमि बोले—"जिन कामनाओं, वासनाओं, इच्छाओं व सांसारिक हीन वृत्तियों से मुक्ति पाने के लिए मैं तपस्यारत था, भला उसे छोड़कर मैं पुनः बंधन में डालने वाली उन्हीं कामनाओं में क्यों फँसूँ? सभी बंधनों से मुक्त कर भगवत्प्राप्ति कराने वाली आध्यात्मिक साधना को छोड़कर कौन बुद्धिमान स्वर्ग-सुख व संसार-सुख की कामना करेगा? साधना से प्राप्त आध्यात्मिक पूँजी तो भगवत्प्राप्ति के लिए ही होनी चाहिए, स्वर्ग-सुख या संसार-सुख के लिए नहीं।"

राजा अरिष्टनेमि पुनः बोले—"देवराज! मैं आपके स्नेह का आभारी हूँ। आपका स्वर्ग उन्हें प्राप्त हो, जो उसके लिए प्रयास करते हैं या जो उसकी कामना करते हैं। मुझे तो आप उसी गंधमादन पर्वत पर भेजने की कृपा करें, जहाँ के शांत वातावरण में जप, तप, ध्यान करते हुए मेरी आत्मा तृप्त हो रही थी।"

राजा की ऐसी बातें सुनकर देवराज ने उन्हें हृदय से लगा लिया और बोले—"राजन्! आपके आगमन से मेरा स्थान पवित्र हो गया। आपने मानव शरीर की उस गरिमा को जान लिया है, जिसके कारण देवता भी मानव शरीर धारण करने के लिए आतुर रहते हैं। आप वस्तुतः तत्त्वज्ञान के अधिकारी हैं तथा इस दिशा में आपका सहयोग करके हम भी कृतकृत्य होंगे।" तब देवराज ने उच्चस्तरीय साधना व तत्त्वज्ञान की प्राप्ति हेतु उन्हें महर्षि वाल्मीकि के पास भेज दिया। महर्षि वाल्मीकि के मार्गदर्शन व आशीर्वाद से राजा को शीघ्र ही अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति हो गई।

प्रलोभनों और सांसारिक आकर्षणों को दरकिनार कर सद्गुरु के मार्गदर्शन में उच्चस्तरीय साधना कर उन्होंने जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त किया और मानव देह की गरिमा व सार्थकता को सिद्ध किया। सचमुच जीवन के परम लक्ष्य की प्राप्ति में ही मानव देह की सार्थकता, मानव देह की गरिमा है। ❑

ऋषि याज्ञवल्क्य ने अपनी संपत्ति अपनी दोनों पत्नियों को बाँटने की सोची।

उनकी एक पत्नी कात्यायनी ने तो मिली संपत्ति को ग्रहण कर लिया, परंतु दूसरी पत्नी मैत्रेयी ने नहीं।

उसने पूछा—"क्या इस संपत्ति से मुझे वह परमपद मिल जाएगा, जिसकी प्राप्ति के लिए आप यह सब छोड़ना चाहते हैं?"

याज्ञवल्क्य बोले—"पृथ्वी की संपूर्ण संपदा के बदले भी वह परमपद मिलने वाला नहीं।"

यह सुनकर मैत्रेयी बोली—"तब उसे लेकर मैं क्या करूँ?" आप मुझे परमपद की प्राप्ति का उपाय बताइए।

तब ऋषि याज्ञवल्क्य ने उसे ब्रह्मविद्या की प्राप्ति का उपाय बताया।

नववर्ष की मंगलकामना

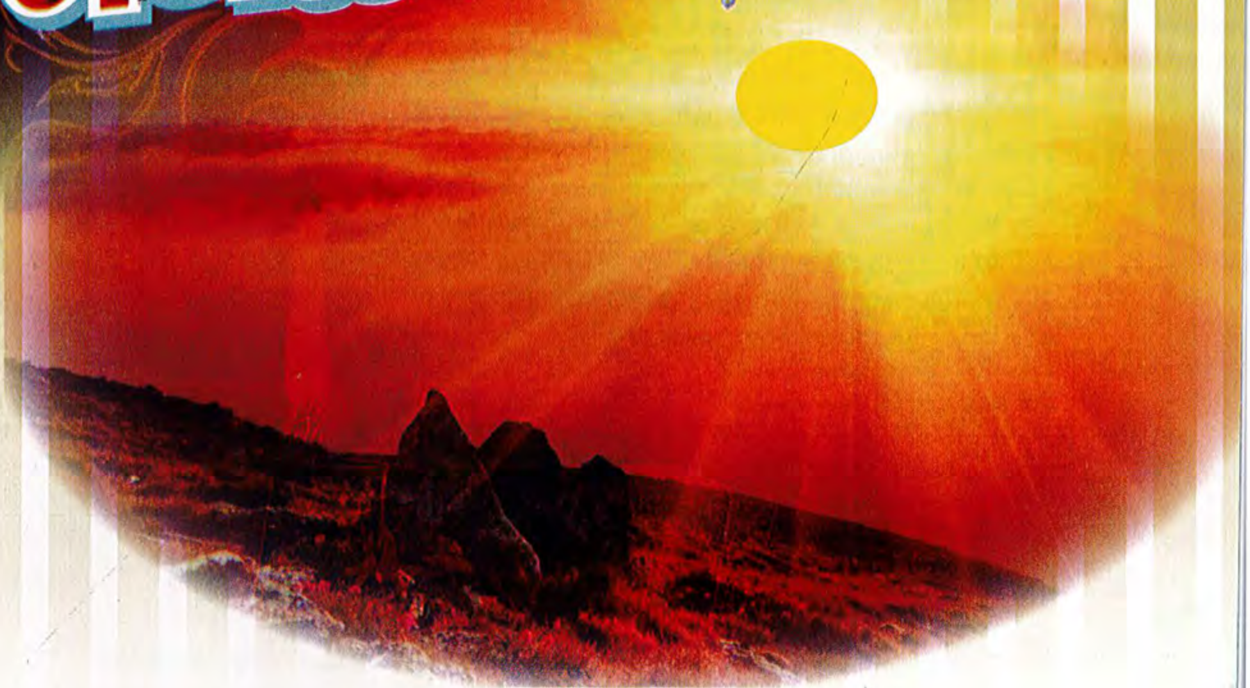

वेदमाता, देवमाता, विश्वमाता माँ गायत्री हम सबको सद्बुद्धि प्रदान करें। हम सब मिलकर सन्मार्ग पर चलते हुए धरती पर स्वर्ग की कल्पना को साकार करने में सतत प्रयत्नशील रहें।

❋ अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा

❋ युग निर्माण योजना
मथुरा

❋ शांतिकुंज
हरिद्वार

प्रमुख पर्व-त्योहार- 2025

12	जनवरी	विवेकानंद जयंती/
		राष्ट्रीय युवा दिवस
14	जनवरी	मकर संक्रांति/प्रयाग शाही स्नान
23	जनवरी	नेताजी सुभाष चंद्र बोस जयंती
26	जनवरी	गणतंत्र दिवस
30	जनवरी	शहीद दिवस
02	फरवरी	वसंत पंचमी/बोधदिवस
12	फरवरी	संत रविदास जयंती
26	फरवरी	महाशिवरात्रि
01	मार्च	रामकृष्ण परमहंस जयंती/
		फुलरिया दूज
13	मार्च	होलिका दहन
14	मार्च	होली, धूलिवंदन
30	मार्च	नवरात्रारंभ/संवत्सरारंभ
31	मार्च	ईदुलफित्र*
06	अप्रैल	श्रीराम नवमी
10	अप्रैल	महावीर स्वामी जयंती
12	अप्रैल	हनुमज्जयंती/चैत्र पूर्णिमा
14	अप्रैल	आंबेडकर जयंती
29	अप्रैल	परशुराम जयंती
30	अप्रैल	अक्षय तृतीया
12	मई	बुद्ध पूर्णिमा
27	मई	वट सावित्री व्रत
29	मई	महाराणा प्रताप जयंती
05	जून	गायत्री जयंती/गंगा दशहरा/
		महाप्रयाण दिवस पूज्य गुरुदेव
06	जून	निर्जला एकादशी व्रत
07	जून	ईदुज्जुहा*
11	जून	कबीर जयंती/ज्येष्ठ पूर्णिमा
27	जून	रथयात्रा/मोहर्रम*
06	जुलाई	देवशयनी एकादशी व्रत
10	जुलाई	गुरु पूर्णिमा(व्यास पूर्णिमा)
09	अगस्त	रक्षाबंधन
15	अगस्त	स्वतंत्रता दिवस/श्रीकृष्ण जन्माष्टमी 'स्मा.'
16	अगस्त	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी 'वै.'
27	अगस्त	गणेश चतुर्थी
28	अगस्त	ऋषि पंचमी
29	अगस्त	बलदेव छठ (देवछठ)
31	अगस्त	राधाष्टमी
04	सितंबर	वामन जयंती
07	सितंबर	महालयारंभ/महाप्रयाण दिवस
		वं. माताजी
11	सितंबर	माता भगवती देवी शर्मा जयंती
19	सितंबर	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जयंती
21	सितंबर	पितृमोक्ष अमावस्या
22	सितंबर	शारदीय नवरात्रारंभ
02	अक्टूबर	विजयादशमी/गांधी-शास्त्री जयंती
06	अक्टूबर	शरद पूर्णिमा
07	अक्टूबर	वाल्मीकि जयंती
10	अक्टूबर	करवा चौथ
19	अक्टूबर	धन्वंतरि जयंती/धनतेरस
20	अक्टूबर	रूप चतुर्दशी
21	अक्टूबर	दीपावली
22	अक्टूबर	गोवर्धन पूजा/अन्नकूट
23	अक्टूबर	भाईदूज/यमद्वितीया
27	अक्टूबर	सूर्य षष्ठी
31	अक्टूबर	अक्षय नवमी
02	नवंबर	देव प्रबोधिनी एकादशी/देवठान
05	नवंबर	गुरु नानक जयंती/देव दीपावली
14	नवंबर	बाल दिवस
01	दिसंबर	गीता जयंती/मोक्षदा एकादशी
04	दिसंबर	दत्तात्रेय जयंती
25	दिसंबर	क्रिसमस

*चंद्रदर्शन के अनुसार परिवर्तनीय

मंगलवर्ष– 2025

जनवरी

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
			01	02	03	04
05	06	07	08	09	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

फरवरी

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
						01
02	03	04	05	06	07	08
09	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	

मार्च

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
30	31					01
02	03	04	05	06	07	08
09	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

अप्रैल

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
		01	02	03	04	05
06	07	08	09	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30			

मई

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
				01	02	03
04	05	06	07	08	09	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

जून

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
01	02	03	04	05	06	07
08	09	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30					

जुलाई

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
		01	02	03	04	05
06	07	08	09	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

अगस्त

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
31					01	02
03	04	05	06	07	08	09
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

सितंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
	01	02	03	04	05	06
07	08	09	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

अक्टूबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
			01	02	03	04
05	06	07	08	09	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

नवंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
30						01
02	03	04	05	06	07	08
09	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

दिसंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
	01	02	03	04	05	06
07	08	09	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

शुभकामना

वैश्वदेवीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः।
अतिक्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमाः सर्ववीरा मदेम॥

— अथर्व० 12/2/28

हमारे विचार सदैव शुद्ध व पवित्र रहें। हम दूसरों को भी कुमार्ग से बचाकर सन्मार्ग की ओर ले जाएँ, ताकि सभी मिलकर पूर्ण आयुष्य प्राप्त करें।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शिक्षा का मूल उद्देश्य

अपने अंतर्मन में हम अनेकों ऐसी संभावनाओं को लिए हैं, जिनका यदि जागरण हो सके तो मनुष्य के प्रसुप्त देवत्व को उभरने एवं उससे चमत्कारिक परिणतियों के उपस्थित होते देर नहीं लगती। मनुष्य का सोया वैभव इतना ही है कि उसने अपनी मानसिक शक्तियों को नहीं पहचाना, तथा यह नहीं जाना कि किस प्रयोजन के लिए उसे असंख्य-अगणित विभूतियों से अलंकृत किया गया है।

हम यह जान सकें कि हमारे अंत:करण में किस विशाल सरोवर का बीज पड़ा है, कितनी महान संपदा के हम अधिकारी हैं, कितने वैभव से परिपूर्ण प्रकृति ने हमें बनाके भेजा है—तो ही यह संभव है कि उस शक्ति को नव-उत्सर्ग की यात्रा का सौभाग्य मिले। शक्ति प्रत्येक में है, इसे नकारा नहीं जा सकता।

जो लोग ऐसा कहते हैं कि कुछ बच्चे विशेष रूप से प्रतिभाशाली होते हैं तो कुछ अपनी क्षमताओं को सही दिशा देने में असमर्थ—उन्हें यह समझना चाहिए कि सत्य कभी मिटता नहीं और वही सत्य जो एक मनुष्य में विलक्षण प्रतिभा के रूप में प्रस्फुटित होता है, वही अन्यों में भी उसी प्रकार घटित एवं आप्लावित हो सकता है।

हम मन की असीम शक्ति-सामर्थ्य से परिचित हों, यह देखें कि कैसे महान सौभाग्य का अधिकारी बना जा सकता है। हमारे जीवन की एक ही कमी है कि हम अपनी आत्मसंपदा को उजागर करना नहीं जानते, यह नहीं देखते कि कैसे सोया अंत:करण यदि जाग जाए तो उससे कितने सच्चे एवं सोद्देश्य प्रयोजनों की परिणतियाँ प्राप्त की जा सकती हैं, हमें विषयों से विलग होकर अपने को देखना-सीखना होगा।

चरित्र की शिक्षा जिस पाठ्यक्रम में न दी जाती हो, मानवीय मूल्य एवं प्रेरणाओं का संपुट जिसमें न हो, जो महानता के आविर्भाव में सहायक कम, बाधक अधिक बने—ऐसी शिक्षापद्धति को हमने वर्षों से ढोया है, बल्कि ऐसा कहना चाहिए कि हम उसी के गुणगान में लगे हुए हैं।

सत्य का परिचय जिससे प्राप्त न होता हो, जो स्थूल एवं उथले उपक्रमों की दिशा में ही हमें लगाती हो, जो पात्रता के विकास पर बल कम और भौतिक उन्नति-सुसज्जा की अधिक पक्षधर हो, उस शिक्षापद्धति को अपनाकर हमने अपना तथा मानव समाज का पतन ही किया है। निश्चित ही उसमें उत्कृष्ट तत्त्व हैं, पर उनका नियमन भी तो किसी उच्च दृष्टिकोण एवं उपयुक्त प्रणाली से होना चाहिए था, जिसका आज सर्वथा अभाव है।

आज हम गली-मुहल्लों में निकलते हैं, कुछ दृश्य हमारे सम्मुख उपस्थित होते हैं तो क्या दिखता है—व्यापक अंधकार। उस चीज की कमी दिखाई देती है, जिसे सर्वप्रथम होना चाहिए था, जो कि अत्यंत ही मूल्यवान है। राष्ट्र की बात तो छोड़ दीजिए अपने निकटवर्ती स्थानों में ही विद्या की कमी एवं अंधचलन का आधिपत्य दिखाई देता है। इसे क्या कहें?

शिक्षा का मूल उद्देश्य मानव समाज को संस्कारित करना है। उसे नवप्राणित कर सच्चे-सोद्देश्य प्रयोजन अपनाने हेतु प्रेरित करना है,

भीतर की संभावना को जगा आत्मिक उत्कर्ष एवं भौतिकता की सीमित रूपरेखा को बताना है।

जब ऐसा हो जाएगा तो मन पर हमारा प्रचंड नियंत्रण स्थापित होना भी घटित होने लगेगा एवं तब मानव सभ्यता अपने उद्गारों में वह नवीनता प्राप्त करेगी, जिसके लिए उसे सदियों प्रतीक्षारत रहना पड़ा है। यही मानव मन की व्यापक समझ का परिणाम होगा, जिसके मूल में है आध्यात्मिक शिक्षा।

अब हम यह समझें कि मन के विकास को किस दृष्टि से देखा जाए। मन क्या है? पूर्ववत् स्मृतियों एवं उत्प्रेरणाओं का संग्रह, भौतिक जगत् के क्रियाकृत्यों एवं अनेकानेक प्रयोजनों की स्मृति। जिसका कोई सशक्त आधार तभी मिलता है; जबकि सत्य से परिचय उसे कराया जाए।

सत्य क्या है? आदि-अनंत-अमृतस्वरूप आत्मा का दिग्दर्शन, स्वयं के स्वरूप में प्रतिष्ठा। जब यह हो जाएगा तो कोई भी प्रयोजन आत्मा के महान उद्गारों से वंचित नहीं रह जाएगा एवं यही इस पीढ़ी की सौभाग्य-भूमि होगी। हम यह समझें कि आत्मिक सत्य की प्राप्ति हेतु ही हमें यह जीवन मिला है, फिर इसे किसी भी दृष्टि से देखा जाए।

यह समझना आवश्यक है कि मन की छिपी शक्तियों को जगाने में कोई बाह्य प्रयोजन काम नहीं आता है। जो कुछ भी होता है वह इस अंतःजाग्रति द्वारा ही होता है—जिसे सत्य की पुकार कहा जा सकता है। इसे ही परम की अभीप्सा का पर्याय कहेंगे तथा यह जीवन में गुणवत्ता प्रदान करने वाली है।

मन की छिपी शक्तियों में बल, उत्साह, धैर्य, लगन, प्रेम तथा अनासक्ति का परिचय प्राप्त है। हम यह समझें कि इस मन को कैसे विकसित किया जाए, सौंदर्य से इसे कैसे आप्लावित बनाया जाए तथा जीवन की धन्यता की दिशा में कैसे बढ़ा जाए।

जब ऐसा हो जाएगा तो एक व्यापक परिवर्तन चित्त में, मानव समाज एवं उसकी क्रिया-प्रणालियों में तथा उत्साह-उमंग से अभिपूरित प्रत्येक हृदय में होगा। जब यह आलोक बिखरेगा तो कोई भी इस घटना से अपरिचित नहीं रह जाएगा, जिसे कि सत्य का श्रीगणेश एवं मानव मन की केंद्रीय-संभावना का उद्घाटन कहा जा सके। ❑

पत्रिका रजिस्टर्ड मँगाएँ

डाक-अव्यवस्था के कारण प्रायः अखण्ड ज्योति न मिलने की शिकायत बनी रहती है। अतः सदस्यों की सुविधा के लिए रु. 240/- वार्षिक (20/- प्रतिमाह) शुल्क अतिरिक्त भेजने पर रजिस्टर्ड डाक से भेजने की व्यवस्था जनवरी 2025 से प्रारंभ की जा रही है।

जो सदस्य इस सुविधा का लाभ उठाना चाहें, वे अपना पूरा नाम, पता, सदस्यता क्रमांक, मोबाइल नंबर सहित रु. 240/- (रु. 20/-मासिक) अतिरिक्त भेजकर सूचना अवश्य दें। यह सुविधा वार्षिक सदस्य, बीसवर्षीय सदस्य एवं 2 से 14 तक इकट्ठी पत्रिका मँगाने वालों के लिए उपलब्ध है।

2 से 14 तक पत्रिका मँगाने वालों को भी मात्र रु. 240/-(20/-प्रतिमाह) ही देना होगा।

स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है तपलोक

करुणा, प्रेम और तप की जीवंत प्रतिमूर्ति थे संत विद्रुध। जप, तप, ध्यान के नियमित अभ्यास से संत विद्रुध के अंतस् में करुणा, प्रेम और संवेदना की रसधार हिलोरें लेने लगी थी और उन दिव्य भावों से आप्लावित होने के कारण उनका मन प्राणियों की सेवा के लिए मचल उठता था। उन्हीं दिव्य भावों से आप्लावित होने के कारण वे जीवन भर दीन-हीनों की सेवा व प्राणिमात्र की भलाई में लगे रहे।

किसी को बिलखता देख लेते तो तत्काल उसकी वेदना मिटाने को आतुर हो जाते। किसी को अभावग्रस्त देखते तो स्वयं उसके लिए आवश्यक साधन जुटा देते। परमार्थ तथा लोक-मंगल—ये ही उनके जीवन की परिभाषा थी। ये ही उनके व्यक्तित्व का सार था। सचमुच जप, तप, ध्यान, सुमिरन करते रहने के बाद भी यदि साधक में करुणा, प्रेम, संवेदना की रसधार नहीं बह रही तब निश्चित ही उनके जप, तप, साधन, सुमिरण में कोई मौलिक दोष व कमी है।

सच्ची साधना से साधक में करुणा, प्रेम, संवेदना वैसे ही फूट पड़ती है, जैसे जमीन से पानी का झरना फूट पड़ता है। सच कहें तो करुणा, प्रेम, संवेदना, समता, शुचिता तथा वसुधैव कुटुम्बकम् की अनुभूति के बिना न सिर्फ ध्यान और समाधि असंभव हो जाते हैं, बल्कि व्यावहारिक जगत् में भी दुःख के फब्बारे फूटते रहते हैं, पर संत विद्रुध की साधना सच्ची थी, इसलिए वे सदैव इन दिव्य भावों से आप्लावित होकर परोपकार व सेवा में संलग्न रहकर स्वयं भी सदैव प्रफुल्लित व आनंदित रहते थे।

वे पल-पल आत्मिक सुख, शांति व आनंद की अनुभूति पाते थे। उन्हें यह धरा, यह धरती, यह दुनिया स्वर्ग से भी सुंदर दीखती थी। यही आत्मदृष्टि है जिससे साधक, संत इस जगत् को देखते हैं, सबमें स्वयं को और स्वयं को सबमें देखते हैं और अद्वैत की अनुभूति पाते हैं। संत विद्रुध को भी उसी अद्वैत की पल-पल अनुभूति होती थी।

संत विद्रुध अब वृद्ध हो चले थे। कोई कितना भी पुण्यात्मा अथवा धर्मात्मा हो, अंत में यह नश्वर देह तो सभी को त्यागनी ही पड़ती है। सो संत विद्रुध का भी अंत समय आया और उनका नश्वर शरीर छूट गया। उन्होंने जीवन भर पुण्य ही कमाया था; क्योंकि उन्होंने अपना पूरा जीवन सेवा और परोपकार में बिताया था। उन्हें अपने उन पुण्यकर्मों के कारण स्वर्गलोक की प्राप्ति हुई।

स्वर्ग आखिर स्वर्ग ही था। वहाँ सुख-भोग की सभी वस्तुओं की प्रचुरता थी। सुखपूर्ण नंदन वन, शीतल जल के सुगंधित सरोवर जिनमें नवजात पद्म मुस्कराते रहते, वायु भी चलती तो मलय भार से दबी-दबी, चारों ओर उल्लास-ही-उल्लास, हँसी-ही-हँसी, आमोद-प्रमोद तथा सुख-साधनों की भरमार।

कुछ दिन तो विद्रुध को वहाँ सभी से मिलने-जुलने में बड़ा आनंद आया। स्वर्ग में सभी आत्माएँ ऊँचे स्तर की ही थीं, किंतु धीरे-धीरे उनका मन उस वातावरण से ऊबने लगा। सुख-साधनों से उन्हें वहाँ वह सुख प्राप्त नहीं हो पाता, जो उन्हें धरती पर जप, तप, सेवा, सुमिरण करते हुए प्राप्त होता था। वहाँ के सुख-साधनों से उन्हें तृप्ति नहीं मिलती। निष्क्रियता शरीर के साथ-साथ जैसे मन को भी जड़ बनाए जा रही थी।

सुरापात्र लिए दिव्य सुंदरियाँ उन्हें तनिक भी संतोष न दे पातीं। उलटे मन की संतप्ति और

बढ़ जाती। वे दिन-रात चिंतित और उदास रहने लगे। एक दिन देवराज इंद्र ने उन्हें एकांत में उदास बैठे देखा तो बोले—''आप यहाँ बहुत दिनों से उदास रहते हैं, अवसाद से घिरे रहते हैं। क्या यहाँ स्वर्ग में हमारी व्यवस्था में कहीं कोई त्रुटि अथवा कमी है? अथवा आपको किसी ऐसी वस्तु की अपेक्षा है, जो यहाँ हम आपके लिए जुटा नहीं सके हैं?''

विद्रुध बड़े गंभीर व सहज स्वर में बोले—''हाँ राजन्! मुझे ऐसी ही वस्तु की अपेक्षा है, जो आपके स्वर्ग में नहीं है।'' इंद्र तब कुछ विस्मित हुए और पूछा—''आखिर वह ऐसी कौन-सी अलभ्य वस्तु है, जिसे कामधेनु और कल्पवृक्ष भी देने में असमर्थ हैं?''

तब विद्रुध ने पुनः कहा—''वह आपके लोक से परे की वस्तु है। यहाँ के समस्त सुख-साधन भी मेरे मन को परितोष, प्रफुल्लता नहीं दे पा रहे हैं। मुझे तो चाहिए वे दीन-हीन प्राणी, जिनकी सेवा कर मैं उन्हें सुख प्रदान कर सकूँ। मुझे चाहिए वे देहधारी प्राणी, जिनकी पीड़ा दूर कर मैं उन्हें प्रफुल्लित कर सकूँ। आप मुझे पुनः मृत्युलोक भेजने की व्यवस्था कर दें तो आपकी बड़ी कृपा होगी।''

देवराज इंद्र ने उसी दिन सभा में घोषणा की—''विद्रुध को इस स्वर्ग से भी महान पुण्यलोक जिसे 'तपलोक' भी कहते हैं, में भेजने की व्यवस्था की जाए।'' सभी ने आश्चर्यपूर्वक देवराज इंद्र का आदेश सुना। एक देवता से आखिरकार रहा नहीं गया और उन्होंने पूछ ही लिया—''स्वर्ग से भी महान आखिर यह कौन-सा 'तपलोक' है?''

इंद्र मुस्कराते हुए बोले—''यह सर्वश्रेष्ठ लोक वही पुण्यमयी पृथ्वी है, पृथ्वीलोक है, जहाँ मानव रहते हैं। मानव जीवन लोक-मंगल में निरत रहने के कारण तथा सेवा और परमार्थ का जीवन जीने के कारण ही सर्वश्रेष्ठ है। पृथ्वीलोक में रहकर ही मानव जप, तप, ध्यान, सुमिरन कर पाता है। मानव के द्वारा किए गए तप से ही समस्त लोकों की व्यवस्थाएँ विधिवत् चल रही हैं। पृथ्वीलोक में जो पुण्यकार्य करता है, वही देवता बनकर स्वर्ग की शोभा बढ़ाता है और समस्त ऐश्वर्यों का भोग करने का अधिकारी होता है, किंतु संत विद्रुध इतने महान हैं कि स्वर्ग का आनंददायक वातावरण भी, इनकी सेवा और परमार्थ-भावना से पूरित आत्मा को आह्लादित नहीं कर सका है। इसीलिए इन्होंने पुनः उसी तपलोक यानी पृथ्वीलोक में जाने की इच्छा प्रकट की है।''

इंद्र बोले—''धन्य हैं संत विद्रुध और उनकी सेवा तथा लोक-मंगल की भावनाएँ।'' समस्त देवताओं का मस्तक विद्रुध के समक्ष श्रद्धावनत् हो गया। विद्रुध पृथ्वी पर लौट आए और पुनः आत्मतृप्ति, आत्मिक आनंद, आत्मिक आह्लाद प्रदान करने वाले सेवा-कार्यों की पूर्ति में संलग्न हो गए। ❑

चिड़िया मछली से बोली—''बहन मछली! तुम कभी पानी से बाहर क्यों नहीं निकलतीं। यहाँ इतनी सुंदर दुनिया है। हम लोग साथ घूमेंगे और मजा करेंगे।'' पानी से बाहर आते ही मछली के प्राण-पखेरू उड़ गए। यह दृश्य देख रहे ऋषि अपने शिष्यों से बोले—''परमात्मा ने सृष्टि के इस प्राणी के लिए एक धर्म और मर्यादा नियत की है। ग्रह-नक्षत्र भी अपनी निर्धारित धुरी से अन्यत्र गति नहीं करते। मर्यादाओं का उल्लंघन करने वाले त्रास सहते और कष्ट पाते हैं।

पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा-28

संवेदना की मिसाल

गुरुदेव के अबोध बचपन की बातों का तो ठीक से पता नहीं, पर जबसे वे कुछ समझने-समझाने लायक हुए तबसे उन्होंने अपनी साहसिक शूरवीरता को भी आगे ही रखा। जिस गाँव में जन्मे थे उस गाँव की एक बुढ़िया मेहतरानी के पैर में कीड़े पड़ गए थे।

वह अकेली थी, इस स्थिति में कोई उसकी सेवा-चिकित्सा करने को तैयार न होता था। कीड़ों के कष्ट से बुढ़िया बेतरह रोती-चिल्लाती, गुरुदेव से न रहा गया। वे चिकित्सक के पास गए। चिकित्सक देखने जाने को तैयार न हुआ तो पीठ पर लादकर उसे ले गए।

बारह वर्ष का बालक जब एक मन से अधिक भारी बुढ़िया को घोड़े की तरह चारों पैरों से चलता हुआ लेकर चिकित्सक के पास पहुँचा तो सब दंग रह गए। सुसंपन्न घर का, उच्च ब्राह्मण कुल का बालक अछूत मेहतरानी को इस प्रकार पीठ पर लादकर चिकित्सक के पास पहुँचे, यह एक बिलकुल अनहोनी बात थी।

चिकित्सक से विधि पूछी, दवा ली और जब तक बुढ़िया अच्छी न हो गई रोज ही उसकी मरहम-पट्टी करने को ही नहीं, उसकी भोजन-व्यवस्था करने भी उसके घर जाते रहे।

अब से पचास वर्ष पूर्व का जमाना दूसरा था। उन दिनों छुआछूत अब से अधिक थी। फिर पंडित ब्राह्मण तो नहाने, छूने, खाने में ही धर्म को समेटे बैठे थे।

ऐसी परिस्थिति में उनके पूरे परिवार ने विरोध किया, गाँव के दूसरे लोगों ने भी उँगली उठाई। नतीजा यह हुआ कि उनके घर में घुसने पर प्रतिबंध लग गया। 12 वर्ष का बालक आखिर करता ही क्या? घर से बाहर उन्हें हाथ पर रोटी दी जाती; कोई उन्हें छूता नहीं, घुड़साल में चारपाई डाल दी गई।

यह सब हुआ, पर मेहतरानी बुढ़िया की सेवा तब तक नहीं छूटी, जब तक कि वह पूरी तरह अच्छी नहीं हो गई। जब चिकित्सा क्रिया बंद हो गई, तब ब्राह्मणों की पंचायत ने दंड दिया कि इसे प्रायश्चित के लिए गंगास्नान करने भेजा जाए और ब्रह्मभोज की व्यवस्था की जाए।

12 वर्ष के बालक का साहस तो देखिए, उन्होंने यही कहा—मैंने ऐसा कोई पाप नहीं किया है, जिसका प्रायश्चित करना पड़े। गंगास्नान जैसे शुभकार्य में मुझे श्रद्धा है, पर प्रायश्चित के रूप में तो उसके लिए भी तैयार नहीं हूँ। बहुत दिनों तक यह झंझट चलता रहा।

सारा परिवार, सारा गाँव, सारा समाज एक ओर और 12 वर्ष का बालक एक ओर। बालक प्रह्लाद की तरह अड़ा ही रहा, समय ने वह बात पीछे डाल दी।

बहिष्कार समाप्त हो गया, पर चर्चा बनी रही कि जिसे मनुष्य सही समझे उसके लिए कितना कठोर और दृढ़ होना चाहिए, इसका उदाहरण एक छोटे लड़के ने किस बहादुरी से प्रस्तुत किया। ❑

प्राणी शुभकर्मों से देवयोनि को प्राप्त होता है और मिले-जुले कर्मों से मनुष्ययोनि को प्राप्त होता है।

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

शेरों का रोचक संसार

शेर को जंगल का राजा कहा जाता है, जो अपनी शक्ति, सौंदर्य, साहस, वीरता और भव्यता के कारण सभी के दिलों पर राज करता है। आश्चर्य नहीं कि सिंह भगवती जगदंबा का वाहन भी है और जिसके चलते उन्हें हम शेरोंवाली माता के नाम से भी पुकारते हैं।

इसके अतिरिक्त सिंह का ज्योतिष में अपना विशिष्ट अर्थ है तथा हमारी संस्कृति के एक महत्त्वपूर्ण प्रतीक के रूप में विशेष स्थान है। प्रस्तुत है इस राजसी जीव से जुड़े कुछ रोचक एवं रोमांचक तथ्य, जो पाठकों की कई जिज्ञासाओं का समाधान कर सकते हैं।

शेर समूह में रहना पसंद करते हैं, जिसे अँगरेजी में प्राइड कहा जाता है। एक समूह में इनकी संख्या 30 तक हो सकती है। जिनमें 2-4 नर, शेष मादा और इनके शावक रहते हैं। शेर को प्रकृति ने मांसाहारी जीव बनाया है, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर इसे कुछ विशिष्ट घास एवं पौधों का भी भक्षण करते देखा गया है। इस तरह सिंह सर्वभक्षी जीव है। शेर 3 से 4 दिन में भोजन करता है और औसतन इसे 5 से 7 किलो मांस की आवश्यकता रहती है।

शेर बिना भोजन के 1 सप्ताह तक रह सकता है और फिर शिकार मिलने पर एक समय में 50 किलो तक मांस भक्षण कर सकता है, जो इसके शरीर का एक-चौथाई होता है।

शेर की दृष्टि मनुष्य से 6 गुना अधिक तीव्र है और ये रात को भी देखने में सक्षम होते हैं, जिसके कारण शिकार पर भारी पड़ते हैं। शेर तूफानों के बीच भी शिकार करते हैं।

इस दौरान हवा और बारिश के शोर में शिकार को इनके आने का भान नहीं हो पाता है, जिसके कारण ये आसानी से शिकार कर पाते हैं। मालूम हो कि शेर ही एकमात्र बिल्ली परिवार के जीव हैं, जो एक साथ दहाड़ सकते हैं।

इनके शावक भी इसमें शामिल हो जाते हैं और यह दहाड़ प्रायः 40 सेकंड तक चलती है। शिकार अधिकांशतः मादा ही करती हैं और इनका झुंड पूरी रणनीति के तहत शिकार का घिराव करता है और उसे उसके झुंड से अलग कर शिकार करता है।

इस दौरान प्रायः नर सिंह अपने इलाके की पहरेदारी तथा शावकों की रक्षा करता है। नर सिंह बड़े शिकार में ही हाथ डालता है और एक नर शेर दिन भर में औसतन 21 घंटे सोता है। शेष समय वह शिकार के साथ झुंड की रखवाली करता है।

शेर पारिवारिक जीव हैं, जो एक साथ रहना पसंद करते हैं और मिल-जुलकर सिंह-शावकों का लालन-पालन करते हैं। सिंह-शावक झुंड में किसी भी मादा का स्तनपान कर सकता है। इनमें पारिवारिक भाव सघन होता है। शेर भी अपने नन्हे शावकों का पूरा ध्यान रखता है।

साथ ही शेर बहुत ही समायोजी जीव है, कालाहारी के रेगिस्तानों में जहाँ जल का अभाव रहता है, सिंह अधिकांशतः जल की आपूर्ति अपने शिकार से करता है और आवश्यकता पड़ने पर तसम्मा तरबूज के फल को खाकर भी अपना काम चला लेता है।

एक अफ्रीकी नर सिंह का औसतन भार 190 किलो रहता है और मादा का 126 किलो; जबकि

एशियाई शेर इससे थोड़े कम वजनी तथा लघुकाय होते हैं।

एक शावक के शरीर में चकत्ते होते हैं, जो बड़े होने पर विलुप्त हो जाते हैं। इनके कारण शिकारी पशुओं की नजर से शावक बचे रहते हैं। शेर 81 किमी प्रतिघंटा की गति से दौड़ सकते हैं और इनकी दहाड़ को 8 किमी दूर से सुना जा सकता है और नर सिंह की अयाल इसका विशेष आकर्षण रहती है। आयु के साथ ये बड़ी होती है और 16 सेंटीमीटर तक आकार ले सकती है, जो इनके रौब-रुतबे को दरसाती है।

ये जितनी काली होती है, उनकी आयु उतनी अधिक मानी जाती है और एक शेर जंगली परिवेश में 12 से 16 वर्ष तक जीता है; जबकि संरक्षण में 20 वर्ष से अधिक जीवित रहता है। अब तक सबसे उम्रदराज संरक्षित सिंह की आयु 29 वर्ष पाई गई है।

इस समय विश्व में शेरों की संख्या बहुत सीमित रह गई है। आँकड़ों के हिसाब से लगभग 24,000 शेर पृथ्वी पर शेष बचे हैं, जिनमें अधिकांश अफ्रीका के सवाना जंगलों व घास के मैदानों में हैं। मालूम हो कि सिंह को घास के मैदानों में विचरण बहुत पसंद है।

भारत में मुख्यत: गिर जंगलों में शेरों का समूह रहता है। भारत में इनकी संख्या 700 के लगभग मानी जाती है। अफ्रीका के 4,15,000 जंगली हाथियों की तुलना में शेरों की संख्या काफी कम है।

पिछली 3 पीढ़ी में अफ्रीका के शेरों की संख्या 40 प्रतिशत कम हुई है। इसका एक कारण मानव का स्वयं व अपने मवेशियों के लिए इनसे खतरा है। इसका कारण बढ़ती जनसंख्या तथा कटते जंगल हैं, जिसके कारण इनका प्राकृतिक निवास स्थान सिकुड़ रहा है और भोजन की खोज में मजबूरन ये मानवीय बस्तियों में पालतू जानवर पर हमला कर रहे हैं।

जलवायु-परिवर्तन भी इसका एक बड़ा कारण माना जा रहा है, जिसके कारण बारिश में देर हो रही है, सूखा बढ़ रहा है और शेरों के लिए शिकार की कमी हो रही है। फिर एशिया में पारंपरिक चिकित्सापद्धति में बाघ की हड्डियों की जगह शेर की हड्डियों के उपयोग की माँग बढ़ रही है।

माना जाता है कि पृथ्वी पर शेर लगभग 18 लाख वर्ष पूर्व अस्तित्व में आए और इस दौरान इनके रूप व स्वभाव में अधिक परिवर्तन नहीं आया है। साथ ही आज पूरे विश्वभर में इनके संरक्षण के प्रति जागरूकता के चलते आज इनकी संख्या बढ़ रही है, जो एक सुखद तथ्य है। ❑

भगवान बुद्ध प्रवचन दे रहे थे—''मुमुक्षुओ! दूसरों के संबंध में जानने, सोचने अथवा टीका-टिप्पणी करने की अपेक्षा स्वयं का सुधार करो। अपनी चेतना के दर्पण में अपने मन की मलिनताओं को देखो और जो भी दुर्बलता दिखाई पड़े, उसे मिटाने उसी क्षण से जुट जाओ। बंधनों से मुक्ति ही मोक्ष का मार्ग है और अपने बंधन स्वयं ही खोलने पड़ते हैं।''

परमपूज्य गुरुदेव ने भी यही कहा है कि 'अपना सुधार ही संसार की सबसे बड़ी सेवा है।'

लक्ष्य निर्धारण का महत्त्व

जीवन में सफलता का पहला चरण है—लक्ष्य निर्धारण। यदि लक्ष्य सही ढंग से तय हो गया तो समझो कि आधी सफलता हासिल हो चली। लक्ष्य की स्पष्टता के अभाव में व्यक्ति पेंडुलम की भाँति इधर-उधर हिलता भर रहता है, उसे चलने व आगे बढ़ने का भ्रम होता है, लेकिन वह पहुँचता कहीं नहीं। ऐसे में एक असफल एवं अर्थहीन जीवन का दंश व्यक्ति को सदैव सालता रहता है।

सफलता के लिए लक्ष्य निर्धारण की अपनी प्रक्रिया है। जिसका पहला चरण है स्वयं का बोध तथा अपनी क्षमताओं-संभावनाओं से परिचय, जिनके आधार पर स्पष्ट लक्ष्य तय होता है। जिस अनुपात में हम स्वयं को जानने का प्रयास करते हैं, अपनी क्षमताओं से परिचित होते हैं तथा इनका उपयोग करते हैं, उसी अनुपात में हमारी सफलता की संभावनाएँ बढ़ती जाती हैं।

आश्चर्य नहीं कि परमपूज्य गुरुदेव की पहली पुस्तक, 'मैं क्या हूँ' में पूज्य गुरुदेव सबसे पहले पाठकों को स्वयं के सम्यक बोध के महत्त्व से परिचित करवाते हैं व उसकी प्रक्रिया का व्यावहारिक मार्गदर्शन करते हैं। हमारी सत्ता देह व मन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके परे अनश्वर सत्ता हमारा वास्तविक स्वरूप है।

जब हम स्वयं को देह तक सीमित मान बैठते हैं और स्त्री-पुरुष, लड़का-लड़की अर्थात लैंगिक आधार पर स्वयं का बोध तथा परिचय-पहचान पाते हैं या यदि पेशे के साथ स्वयं को जोड़कर देखते हैं तो डॉक्टर, इंजीनियर से लेकर विद्यार्थी, शिक्षक, किसान, व्यवसायी, नेता, अभिनेता व खिलाड़ी होने का भान हमें होता है।

इसी तरह परिवार-कुटुंब में माता-पिता, पुत्र-पुत्री, भाई-बहन जैसे रिश्तों के रूप में हम स्व की पहचान पाते हैं। इसी तरह गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर हम स्वयं को अच्छा-बुरा, पापी-पुण्यात्मा, श्रेष्ठ-अधम जैसे विशेषणों के साथ जोड़कर देखते हैं, लेकिन स्व का सबसे व्यापक एवं परिष्कृत स्वरूप आत्मतत्त्व है, जिसकी ओर बढ़ने पर हमारी पहचान एक अभीप्सु, एक शिष्य-साधक के रूप में होती है और हमारा जीवनलक्ष्य आकाश की ऊँचाई एवं व्यापकता छूने लगता है।

जितना हम देह बोध में लिपटे रहते हैं, उतना ही हमारा जीवन नर-पशु से नर-पिशाच स्तर तक सीमित रहता है और जितना हम देह भाव से ऊपर उठकर आत्मभाव की ओर बढ़ते हैं, उतना ही नर-मानव से महामानव, देवमानव बनने की ओर अग्रसर होते हैं।

इसके साथ ही अपनी शक्तियों, दुर्बलताओं तथा सीमाओं की समझ लक्ष्य को व्यावहारिक स्वरूप देती है; क्योंकि लक्ष्य का हमारी क्षमताओं व विशेषताओं से जुड़ा होना भी महत्त्वपूर्ण है और यदि हमारा लक्ष्य, अपनी क्षमताओं से जुड़ा हुआ होगा तो इसके साकार होने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

इसके विपरीत अपनी क्षमताओं के प्रतिकूल लक्ष्य निर्धारण सफलता से हमारी दूरी बढ़ा देता है। साथ ही बचपन की कुलबुलाहट, अंतर की पीड़ा, कुछ कर गुजरने का ज्वलंत भाव जब लक्ष्य से जुड़ जाते हैं, तो मंजिल कितनी ही कठिन व विकट क्यों न हो—पथिक अदम्य उत्साह, उमंग एवं आशा के साथ आगे बढ़ता है।

वह राह की हर चुनौती एवं प्रतिकूलताओं को आनंद भाव से पार करते हुए प्रफुल्लता के साथ तय मंजिल की ओर बढ़ता है। वह राह के हर पड़ाव का भरपूर आनंद लेता है और जीवन की आवश्यक सीख को धारण करते हुए अपने परम लक्ष्य की ओर बढ़ता रहता है। इसी राह में पथिक का अपनी ईश्वरप्रदत्त शक्तियों से भी गाढ़ा परिचय होता जाता है।

निश्चित रूप से इनमें इच्छाशक्ति सर्वोपरि है, जिसके आधार पर व्यक्ति यदि कुछ ठान ले, तो उसके लिए कुछ भी अप्राप्य नहीं रह जाता। अपनी आंतरिक एवं बाह्य दुर्बलताओं पर वह इसके बल पर विजय प्राप्त करता है।

कल्पनाशक्ति उसके हौसलों में पंख लगा देती है, लक्ष्य को अकल्पनीय सीमा तक विस्तार देते हुए इसे चरम संभावनाओं से युक्त बना देती है, जबकि बुद्धि-विवेक की शक्ति इन कल्पनाओं के जंजाल को काट-छाँट व तराशकर इन्हें व्यावहारिक स्वरूप देती है और फिर विचारों की अपरिमेय शक्ति अपना कार्य करती है।

जैसा व्यक्ति लगातार सोचता है, वह वैसा ही बनता जाता है। विचारों के अनुरूप ही कार्य बन पड़ते हैं। चित्त के संस्कार रूपाकार लेते हैं और व्यवहार-परिवर्तन संभव होता है। निस्संदेह रूप में यहाँ भावशक्ति ईंधन का कार्य करती है और अंतर्प्रज्ञा व्यक्ति की आध्यात्मिक संभावनाओं के साथ व्यक्ति को जोड़ती है।

स्व के उपरोक्त बोध के साथ व्यक्ति तय करता है कि उसे क्या बनना है, क्या करना है। लक्ष्य की एक रूपरेखा स्पष्ट हो चलती है। तात्कालिक रूप में व्यक्ति का कैरियर गोल अर्थात पेशेवर ध्येय तय होता है। लक्ष्यकेंद्रित युवा यदि ईमानदारी व जिम्मेदारी के साथ अपने अध्ययन में प्रवृत्त होता है, तो उसे रोजगार के लिए अधिक चिंता नहीं करनी पड़ती।

सरकारी विकल्प के साथ वह अपनी योग्यता एवं कौशल के आधार पर मनचाहे रोजगार का सृजन कर लेता है और कालांतर में वह स्वयं के साथ दूसरों के लिए भी आर्थिक स्वावलंबन के आधार जुटा लेता है।

आर्थिक स्थिरता एवं सुरक्षा के साथ जीवन के वृहत्तर लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित कर पाना संभव होता है तथा जीवन को भी एक दिशा मिल जाती है; क्योंकि स्वयं व परिवार तक सीमित जीवन सार्थकता का बोध नहीं दे पाता।

ऐसे में कहीं-न-कहीं अपूर्णता का भाव अंतर्मन को कचोटता रहता है; जबकि समाज, राष्ट्र एवं मानवता से जुड़कर जीवन की गतिविधियों का संचालन जीवन में गहराई लाता है, व्यापकता देता है और मानवीय गरिमा के अनुरूप जीने का संतोष मिलता है।

जीवनलक्ष्य के अनुरूप ही अपना आदर्श भी तय होता है—जो अधिकांशत: कोई प्रेरक व्यक्तित्व रहता है और यह कोई प्रेरक विचार एवं भाव भी हो सकता है। आदर्श एक प्रेरणापुंज के रूप में जीवनलक्ष्य में प्राण फूँकता है, रक्षा कवच का काम करता है, अनावश्यक भटकन से बचाता है और एक प्रेरकशक्ति के रूप में सतत पथिक को मंजिल की ओर प्रवृत्त रखता है।

इस तरह किया गया लक्ष्य का चयन जीवन के कठिन पलों में आवश्यक मार्गदर्शन, सांत्वना एवं शक्ति देता है। इस तरह आत्मबोध से शुरू यात्रा, अपनी क्षमताओं, शक्तियों एवं न्यूनताओं से रूबरू होते हुए अपने लक्ष्य से जुड़ती है और अपने आदर्श के साथ उत्कृष्टता के शिखर की ओर बढ़ती है।

स्व-मूल्यांकन एवं लक्ष्य-निर्धारण के निमित्त नित्य दिया गया कुछ समय हर दृष्टि से समझदारी भरा कदम रहता है, जिसमें साधक अपने अस्तित्व की जड़ों को सींच रहा होता है। ❑

ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—189

गंगाजल पर शोध

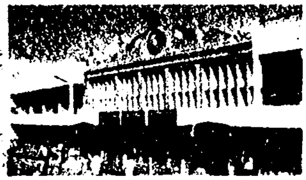

जल हमारे जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। इसके बिना पृथ्वी पर हमारा क्या; अन्य किसी का भी जीवन व अस्तित्व बनाए और बचाए रखना सर्वथा असंभव है। कहने को तो पृथ्वी पर तीन हिस्से से अधिक भाग में किसी-न-किसी रूप में जल विद्यमान है, परंतु हमारे लिए उपयोगी जल की मात्रा केवल 0.5 % ही मौजूद है, जिसे हम ताजा जल कहते हैं।

पृथ्वी पर इस ताजे एवं मीठे पानी की न्यूनता के कारण ही इसका उचित रीति से उपयोग एवं संरक्षण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथा आवश्यक है। यदि उपयोगी जल को संरक्षित, परिष्कृत और प्रदूषणरहित नहीं रख सकते तो वह दिन दूर नहीं जब जलसंकट, पर्यावरण संकट और जीवन-अस्तित्व बनाए रखने का संकट महाविभीषिका बनकर सामने खड़ा हो उठेगा। अतः ताजे एवं उपयोगी मीठे पानी के प्रति समस्त विश्व मानवता में जागरूकता और कर्त्तव्यबोध उत्पन्न करना वर्तमान समय की परम आवश्यकता है।

भारत के भू-भाग पर ताजे पानी के अनेक स्रोत हैं जिनका उपयोग पीने, खाना बनाने, कृषि कार्य, पशुपालन, सिंचाई, उद्योग आदि में किया जाता है। ताजे पानी के स्रोतों में प्रमुख रूप से हमारे देश की जीवनदायिनी नदियाँ हैं, जैसे—गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, कावेरी, गंडक, कृष्णा, चिनाब, राप्ती, नर्मदा, ताप्ती आदि। इन नदियों में जो ताजा पानी प्रवाहमान है उसका मुख्य कारण भौगोलिक संरचना, रासायनिक और जैविक विशेषताएँ हैं।

इन सभी ताजे पानी के स्रोतों की संरचना स्थानीय भौगोलिक स्थिति के अनुसार बनी होती है, जिसके कारण ही इनके आस-पास की पारिस्थितिकी वृक्ष-वनस्पतियों और जीवों को रहने व विकसित होने की अनुकूलता का निर्धारण करती है, परंतु आधुनिक युग में औद्योगीकरण, शहरीकरण व अन्य प्रकार से मानवीय हस्तक्षेप ने इन ताजे पानी के स्रोतों की संरचना और इससे जीवन को अप्रत्याशित क्षति पहुँचाई है।

ताजे पानी के स्रोतों का संपूर्ण जल तंत्र दोहन, प्रदूषण और परिवर्तन के कारणों से संकटग्रस्त है। ऐसे में समय रहते समुचित कदम उठाने एवं इन्हें संरक्षित व उपयोगी बनाए रखने की दिशा में व्यापक प्रयास अत्यंत आवश्यक हो गया है। उक्त आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय में एक अतिमहत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी शोधकार्य संपन्न किया गया है।

विश्वविद्यालय के पर्यावरण विज्ञान विभाग के अंतर्गत वर्ष-2022 में शोधार्थी मोहित कुमार द्वारा **श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी** के विशेष संरक्षण एवं डॉ० विजय शर्मा जी के निर्देशन में इस शोध-अध्ययन को पूर्ण किया गया है। इस अध्ययन का विषय है—'**लिम्नोलॉजिकल असेसमेन्ट ऑफ गंगा रिवर इन हरिद्वार सिटी विद स्पेशल रेफरेन्स टू सीवेज डिस्पोजल**।'

लिम्नोलॉजी अर्थात जल विज्ञान, जिसके अंतर्गत संपूर्ण जल तंत्र एवं जलीय पारिस्थितिकी व हाइड्रोबायोलॉजी से संबंधित पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। विशेष रूप से इसका प्रयोग महाद्वीपों के भीतर जलस्रोतों के अध्ययन में किया जाता है। इसके अंतर्गत जल में रहने वाले जीवों, वनस्पतियों और अजैविक तत्त्वों के पर्यावरण व पारिस्थितिकी परिवर्तन की दृष्टि से पारस्परिक अंत:क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

मानवीय गतिविधियों के कारण ताजे पानी के स्रोतों एवं संरचना में हो रहे परिवर्तनों व समस्याओं के कारणों को जानने की दृष्टि से यह विज्ञान अत्यंत उपयोगी रहा है। इससे प्राप्त तथ्यों एवं जानकारी के आधार पर ही जल-संरक्षण, उपचार एवं सीवेज डिस्पोजल जैसे समाधानपरक उपाय संभव हो पाते हैं।

सीवेज डिस्पोजल अर्थात ऐसी प्रक्रिया जिसमें दूषित जल से इसमें मौजूद हानिकारक पदार्थों को हटाने, समाप्त करने या उपयोगी तत्त्वों में परिवर्तित करने का कार्य किया जाता है। सीवेज प्लांटों में देखा जाता है कि जीवाणुओं के माध्यम से जल प्रदूषित करने वाले अपशिष्ट पदार्थों को अमोनीकरण या नाइट्रीकरण द्वारा परिवर्तित कर जल में प्रदूषण को कम कर दिया जाता है।

इस शोध-अध्ययन में शोधार्थी ने ताजे पानी के स्रोत के रूप में भारत की सबसे प्रमुख नदियों में से एक—गंगा नदी का चयन किया है तथा वैज्ञानिक रीति से अपने अनुसंधान में इस नदी के बढ़ते प्रदूषण, इसके कारणों तथा समाधान के उपायों की तथ्यात्मक वस्तुस्थिति को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

गंगा नदी हिमालय के गंगोत्तरी ग्लेशियर से गोमुख नामक स्थान से निकलकर 2525 किलोमीटर की यात्रा पूरी कर सागर में मिलती है। उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल—इन पाँच राज्यों की भूमि को तृप्त करती हुई गंगा नदी करोड़ों लोगों का जीवन आधार तो है ही, साथ ही भारतीय उपमहाद्वीप का सबसे बड़ा मीठे पानी का पारिस्थितिक तंत्र भी इसमें मौजूद है।

लाखों-करोड़ों लोग पौराणिक एवं धार्मिक महत्ता के कारण इसकी दिव्यता, पवित्रता पर विश्वास करते हैं।

भारतीय संस्कृति और इसकी परंपराओं में गंगा नदी को माता का, देवी का स्थान प्राप्त है और इसके पवित्र जल में स्नान, दर्शन, घरों में रखकर पूजा करना आदि अनेक रूपों में इसके प्रति आस्था दरसाते हैं, परंतु यह अत्यंत चिंता का विषय है कि वर्तमान में गंगा नदी दुनिया की सबसे प्रदूषित नदियों में से एक है। इस विशाल पवित्र नदी के किनारे लगभग 30 शहर, 70 कस्बे और हजारों की संख्या में मानव बस्तियाँ फैली हैं।

इसके प्रदूषित होने का एक बड़ा कारण यही है कि इन सभी के द्वारा मानव बसावट का सीवेज बिना उचित उपचार के सीधे इस नदी में आ जाता है। शोधार्थी ने रेखांकित किया है कि गंगा नदी में डाले जाने वाले कुल कचरे में नगर निगमों का सीवेज 80% और औद्योगिक इकाइयों का 15% भाग होता है।

इसके साथ ही तटों पर कपड़े धोना, लाशों को बहाना, सामूहिक स्नान में अपशिष्ट छोड़ना जैसे कारण भी सम्मिलित हैं। इस अध्ययन में गंगा नदी के प्रदूषण और इसके जलीय तंत्र को प्रभावित करने वाले कारकों को हरिद्वार शहर के परिप्रेक्ष्य में देखा गया है।

गंगा नदी के तट पर बसा यह नगर धार्मिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और पर्यटन की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हरिद्वार, उत्तराखंड राज्य के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शहरों में से भी एक है। विश्व प्रसिद्ध चारधाम यात्रा यहीं से प्रारंभ होती है।

यह कुंभ नगरी भी है और हजारों मंदिरों, आश्रमों, मठों के साथ-साथ एक सुविकसित औद्योगिक इकाइयों का क्षेत्र भी यहाँ स्थित है। पर्यटन विभाग के तथ्यों के अनुसार प्रतिदिन इस शहर में लगभग 70,000 तीर्थयात्री एवं पर्यटकों का आगमन होता है। इसके साथ ही इस शहर की स्थानीय आबादी में भी निरंतर वृद्धि हो रही है।

ऐसे में गंगा नदी के प्रदूषण के यहाँ पर्याप्त कारण हैं। शोधार्थी ने अपने इस अध्ययन के अंतर्गत पाया कि लगभग 14 घरेलू नाले हैं, जो बिना किसी उपचार या रुकावट के सीधे गंगा नदी और गंगा नहर में आकर गिरते हैं। अत: सीवेज प्रदूषण ही हरिद्वार में गंगा प्रदूषण का एक मुख्य कारण है।

वस्तुत: सीवेज में विभिन्न प्रदूषणकारी पदार्थ होते हैं, जो सीधे पानी की गुणवत्ता तथा जलीय पारिस्थितिक तंत्र की जैविक विविधता को प्रभावित कर हानि पहुँचाते हैं। हरिद्वार में निरंतर जनसंख्या वृद्धि और पर्यटकों की बढ़ोत्तरी से सीवेज में भी वृद्धि हुई है, जो गंगाजल-प्रदूषण के स्तर को भी बढ़ा रहा है।

शोध में यह भी पाया गया कि हरिद्वार शहर में सीवेज उपचार यंत्र की कमी व अनुचित उपचार से सीवेज गंगा नदी में मिलकर गंभीर बीमारियों का कारण बन जाता है; क्योंकि सीवेज में अनेक ऐसे हानिकारक रोगाणु व सूक्ष्मजीव होते हैं जो टाइफाइड, पेचिश व अन्य जलजनित रोगों को उत्पन्न कर मनुष्य व अन्य जीवों को नुकसान पहुँचाते हैं।

शोधार्थी द्वारा अपने शोध की प्रयोगात्मक प्रक्रिया को संपन्न करने के लिए हरिद्वार जैसे भारत के महत्त्वपूर्ण धर्मस्थल का चयन करना स्वयं में अध्ययन की विशिष्टता को प्रकट करता है।

गंगा जी जब हिमालय से निकलकर मैदानी भाग में प्रवेश करती हैं तो हरिद्वार ही उसका पहला बड़ा शहर पड़ता है और वैसे तो इसकी आबादी ढाई लाख के आस-पास है, परंतु वर्षपर्यंत यहाँ लाखों श्रद्धालुओं की भीड़ बनी रहती है और गंगा नदी का विस्तार भी यहाँ शहर के बीच अधिक है। ऐसे में गंगा-प्रदूषण का क्षेत्र भी यहाँ बढ़ जाता है। शोधार्थी ने प्रयोग हेतु पूरे हरिद्वार क्षेत्र से कुछ छह स्थानों को जल संकलन एवं जाँच हेतु चयनित किया था।

ये चयनित छह स्थान हैं—

(i) गीता कुटीर घाट,

(ii) भीमगोड़ा बैराज,

(iii) हर की पौड़ी,

(iv) चंडी घाट

(v) प्रेम नगर आश्रम घाट और

(vi) पुल जटवाड़ा।

इस प्रयोग में परीक्षण की अवधि वर्ष—2019 से 2021 तक अर्थात तीन वर्ष थी, जिसमें प्रत्येक माह के अंतराल में उक्त सभी चयनित छह स्थानों से शोधार्थी द्वारा परीक्षण हेतु गंगाजल का संकलन किया गया और शोध-उपकरणों की सहायता से जल की फीजियोकेमिकल पैरामीटर्स व बायलॉजिकल पैरामीटर्स के आधार पर जाँच की गई।

फीजियो केमिकल पैरामीटर्स में जल का तापमान, कुल ठोस पदार्थ, वेलोसिटी, पी-एच, क्लोराइड, कैल्सियम, कठोरता, घुलनशील ऑक्सीजन की मात्रा आदि को देखा गया तथा जैविक पैरामीटर्स में डायवर्सिटी व जूप्लेंकटन फाइटोप्लेंकटन डायवर्सिटी का मापन किया गया।

शोध-उपकरणों में जल संकलन हेतु कंटेनर, थर्मामीटर, वाटर एंड सॉइल एनालिसिस किट (मॉडल 191E), एपीएचए (1995) तथा त्रिवेदी एवं गोयल (1986) को प्रयुक्त कर समस्त परीक्षण कार्य को देव संस्कृति विश्वविद्यालय स्थित प्रयोगशाला में ही संपन्न किया गया। प्रयोग की अवधि समाप्त होने पर शोधार्थी ने परीक्षण से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण कर परिणाम रूप में यह पाया कि घरेलू सीवेज गंगा नदी के जल को सीधे प्रभावित कर प्रदूषित कर रहा है।

इस सीवेज प्रदूषण से गंगाजल की गुणवत्ता खराब हो रही है तथा उसके जलीय पारिस्थितिक तंत्र में भी गिरावट आ रही है। फाइटोप्लेंकटन व जूप्लेंकटन विविधता में भी गिरावट देखी गई है।

शोध परिणाम में यह भी देखा गया कि सीवेज कुछ स्थानों पर नाइट्रीकरण के लिए जिम्मेदार है। साथ ही जैविक आक्सीजन की माँग भी प्रभावित हो रही है, जिससे गंगाजल पर आश्रित संपूर्ण जैविक प्रजातियाँ भी प्रभावित हो रही हैं।

शोधार्थी का अपने शोध परिणामों के आधार पर मत है कि गंगा-प्रदूषण के समाधान हेतु सर्वप्रथम सीवेज निस्तारण को सही करना आवश्यक है। इसके लिए सीवेज उपचार-क्षमता बढ़ाने की अत्यंत आवश्यकता है।

साथ ही नियमित जैविक, रासायनिक व गुणवत्ता की दृष्टि से गंगाजल की निगरानी भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त ठोस अपशिष्ट पदार्थों को डालने पर भी पूर्णतः प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए तथा जनजागरूकता ही गंगा प्रदूषण को रोकने में ठोस प्रयास हो सकते हैं। ❑

चार स्नातक अपने विषयों में निष्णात होकर घर वापस लौट रहे थे। चारों को अपनी विद्या पर बहुत गर्व था। रात्रि निकट थी, इसलिए रास्ते में पड़ाव डालना पड़ा। भोजन बनाने के प्रबंध में सभी ने अपना योगदान देने की बात कही। क्रमशः वे सभी भोजन तैयार करने में संलग्न हुए।

सर्वप्रथम उनमें से एक तर्कशास्त्री आटा लेने बाजार गया। खरीद के उपरांत बाजार से लौटा तो स्वभाववश अपनी तर्कबुद्धि लगाकर सोचने लगा कि पात्र वरिष्ठ है या आटा। तथ्य जानने के लिए उसने बरतन को उलटा तो दुर्भाग्यवश आटा रेत में बिखर गया।

उन्हीं में एक कलाशास्त्री भी था, जिसने आपसी सहमति के आधार पर ईंधन हेतु जंगल जाकर लकड़ी काट लाने के कार्य को चुना था। सौंदर्यप्रिय कलाशास्त्री ने सुंदर हरे-भरे वृक्ष पर मुग्ध होकर गीली टहनियाँ काटीं व उन्हें ही बटोरकर ले आया। दिखने में सुंदर लग रहीं गीली लकड़ियों से ईंधन का कार्य ले पाना दुष्कर था, परंतु विवश हो उन्हीं से जैसे-तैसे चूल्हा जला। थोड़ा चावल जो पास में था, उसी को किसी प्रकार पकाया जाने लगा। भात जब पका तो उसमें से 'खुद-बुद' की आवाज होने लगी।

विद्वानों की जमात में तीसरा पाकशास्त्री उसी का ताना-बाना बुन रहा था तो चौथे साथी ने उबलने पर उठने वाले 'खुद-बुद' शब्दों को ध्यानपूर्वक सुना और व्याकरण के हिसाब से इस उच्चारण को गलत बताकर उस बटलोई पर जोर से एक डंडा जड़ दिया। भात चूल्हे में फैल गया। अपनी मूर्खता पर पछताते वे चारों भूखे ही सोने लगे तो पास में पड़े एक सामान्य से ग्रामीण सज्जन ने अपनी पोटली में से नमक-सत्तू निकालकर उन्हें खिलाया और विनम्रतापूर्वक उन्हें समझाया कि पुस्तकीय ज्ञान की तुलना में व्यावहारिक अनुभव का मूल्य अधिक है।

युगगीता — 296

वह जो अपने सत्य स्वरूप में स्थित है

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की दसवीं किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के नौवें श्लोक की विस्तृत विवेचना इससे पूर्व की किस्त में की गई थी। इस सूत्र में श्रीभगवान सात्त्विक त्याग के लक्षणों की चर्चा करते हैं। वे कहते हैं कि 'केवल कर्त्तव्य मात्र करना है'—ऐसा समझकर जो नियत कर्म आसक्ति और फलेच्छा का त्याग करके किया जाता है—वही सात्त्विक त्याग कहलाता है। राजसिक त्याग में शारीरिक क्लेशों के भय से कर्म करने को त्याग दिया जाता है तो तामसिक त्याग में मूढ़ता के कारण उन कर्मों को त्याग दिया जाता है, जो कर्म करने आवश्यक होते हैं। इनके विपरीत सात्त्विक त्याग उसे माना जाना चाहिए, जिसमें उपरोक्त दोनों तरह से त्याग नहीं किया जाता, बल्कि कर्मों को कर्त्तव्य मानकर करते हुए निष्काम भाव से, परमात्मा को समर्पित करते हुए किया जाता है।

राजसिक व तामसिक त्याग बाह्य दृष्टि से इस भ्रम को उत्पन्न करते हैं कि कुछ त्यागा गया है, पर मन व संस्कारों का संबंध जुड़ा रहता है। इसके विपरीत सात्त्विक त्याग में बाहर के कर्म करते रहने पर भी भीतर से संबंध विच्छेद हो चुका होता है। ऐसे में व्यक्ति उन कर्मों को कर्त्तव्य समझकर करता है। इसीलिए भगवान कृष्ण इस सूत्र में अर्जुन से कहते हैं कि मात्र कर्त्तव्य कर्म करने हैं, यानी वो कर्म करने हैं, जिनमें कर्म करने की आसक्ति न हो, कर्मों के फल के प्रति आसक्ति न हो, मन में मोहजन्य भाव न हो और भय के वशीभूत होकर उन कर्मों को न किया जा रहा हो। सात्त्विक त्याग में कर्म और कर्मफलरूपी संसार से संबंधों का विच्छेद हो जाता है और मुक्ति का पथ प्रशस्त हो जाता है।]

इसके बाद श्रीभगवान अगला सूत्र कहते हैं—

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म, कुशले नानुषज्जते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो, मेधावी छिन्नसंशयः ॥ *10*॥

शब्दविग्रह—न, द्वेष्टि, अकुशलम्, कर्म, कुशले, न, अनुपज्जते, त्यागी, सत्त्वसमाविष्टः, मेधावी, छिन्नसंशयः।

शब्दार्थ—अकुशल (**अकुशलम्**), कर्म से (तो)(**कर्म**), द्वेष नहीं करता (और) (**न, द्वेष्टि**), कुशल कर्म में (**कुशले**), आसक्त नहीं होता (वह)(**न, अनुषज्जते**), शुद्ध सत्त्वगुण से युक्त पुरुष (**सत्त्वसमाविष्टः**), संशयरहित (**छिन्नसंशयः**), बुद्धिमान (और)(**मेधावी**), सच्चा त्यागी है (**त्यागी**)।

अर्थात जो अकुशल कर्म से द्वेष नहीं करता है और कुशल कर्म में आसक्त नहीं होता है—वह त्यागी, बुद्धिमान, संदेहरहित और अपने स्वरूप में स्थित है। यहाँ भगवान जीवन के एक अद्भुत किंतु शाश्वत सत्य की ओर इशारा करते हैं। मानवीय स्वभाव है कि हम किसी वस्तु को ग्रहण राग के वशीभूत होकर करते हैं और उसको त्यागने का कारण द्वेष बन जाता है।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

यही भाव कर्मों को करने के पीछे का कारण भी बनता है। यहाँ भगवान कृष्ण, इस सूत्र में कहते हैं कि वास्तव में श्रेष्ठ तो वही मनुष्य कहा जा सकता है जो शुभ कर्म तो करता है, पर रागपूर्वक नहीं करता और अशुभ कर्मों को त्यागता भी है, परंतु द्वेषपूर्वक नहीं त्यागता।

श्रीभगवान का यह वचन उस सभ्य समाज में प्रचलित भ्रांतियों के निर्मूलन हेतु भी है। उस समय समाज में अधिकांश लोग विविध प्रकार के यज्ञों का अनुष्ठान करते हुए दिव्य लोकों की प्राप्ति को ही कर्म का उद्‌देश्य समझते थे।

इसीलिए कठोपनिषद् में यमराज, नचिकेता को स्वर्गादि सुखों का प्रलोभन देते हुए कहते हैं कि—

ये ये कामा दुर्लभा मर्त्यलोके
सर्वान् कामांश्छंदतः प्रार्थयस्व।
इमा रामाः सरथाः सतूर्या
न हीदृशा लभ्यनीया मनुष्यैः॥

—*कठोपनिषद् 1/1/25*

अर्थात जो-जो कामनाएँ मनुष्य लोक में दुर्लभ हैं, उन संपूर्ण भोगों को इच्छानुसार तुम मेरे से माँग लो। अभिप्राय ये है कि उस समय कर्मों को करने का एक बड़ा कारण स्वार्थ अथवा भय होता है। शुभ कर्म फल की कामना से किए गए कर्म हों, जो उच्च योनियों में ले जाते हैं (ऐसे कुशल कर्म ही) अथवा ऐसे अशुभ कर्मफल प्रदान करने वाले कर्म हों, जो निम्न योनियों में ले जाते हैं—ऐसे सब कर्म अकुशल कहलाते हैं।

भगवान कृष्ण कहते हैं कि जो त्यागी, मेधावी है, संदेहरहित है—वह ऐसे अकुशल कर्मों का त्याग तो करता है, पर न राग के कारण करता है कि कुछ मिले और न द्वेष के कारण करता है कि कुछ न मिले। ऐसा इसलिए कि ऐसा करने से कर्मों से संबंध छूट सकता है, पर फिर वो संबंध राग एवं द्वेष से जुड़ जाता है, जो और ज्यादा कष्टकारक है।

यहाँ भगवान ऐसे मनुष्य को त्यागी कहकर के पुकारते हैं; क्योंकि सही त्याग तो तभी है जब कर्मों को करने या न करने, दोनों में निर्लिप्तता यथावत् रहे। श्रीभगवान ऐसे मनुष्य को मेधावी भी कहते हैं अर्थात ज्ञानरूपी मेधा से सुसज्जित जिसका व्यक्तित्व हो। ऐसे व्यक्ति को ही यह बोध होता है कि सच्चा त्याग कर्मों के प्रति निर्लिप्तता से जन्म लेता है और इसीलिए ऐसा मनुष्य **छिन्नसंशयः** अर्थात संशयरहित होता है; क्योंकि संदेह तो वहीं होता है, जहाँ अधूरा ज्ञान हो और यहाँ पर साधक के मन में कोई संशय नहीं होता; क्योंकि उसका ज्ञान, उसकी मेधा सच्चे अनुभव से जन्मे होते हैं।

ऐसा व्यक्तित्व फिर योगारूढ़ हो जाता है और अपने सत्य स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाता है। उस अवस्था को महर्षि पतंजलि योगसूत्र में **स्वरूपेऽवस्थानम्** (1/3) कहकर के पुकारते हैं और यहाँ भगवान कृष्ण ने ऐसे व्यक्तित्व को **सत्त्वसमाविष्टः** अर्थात जो अपने सत्य स्वरूप में स्थित है—कहकर संबोधित किया है। (क्रमशः)

दिशा निर्धारित कर लेने पर मार्गदर्शक तो पग-पग पर मिल जाते हैं। कोई न भी मिले तो अपनी ही अंतरात्मा उस आवश्यकता की पूर्ति कर देती है। प्रतिभा का धनी न कभी हारता है और न अभावग्रस्त रहने की शिकायत करता है। उसे किसी पर दोषारोपण करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती कि उन्हें अमुक ने सहयोग नहीं दिया या प्रगति पथ को रोके रहने वाला अवरोध अटकाया। प्रतिभा ही तो शालीनता और प्रगतिशीलता की आधारशिला है।

—*परमपूज्य गुरुदेव*

ज्योति कलश यात्राओं का प्रणेता बना विश्वविद्यालय

गायत्री परिवार के इष्ट पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी द्वारा प्रज्वलित एवं संरक्षित दिव्य अखंड दीप के शताब्दी समारोह को सफल बनाने के लिए पूज्यवर के सशक्त संवाहक देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने इस महाअभियान से प्रबुद्ध वर्ग को जोड़ने के संकल्प को साकार करना आरंभ कर दिया है, जिसके अंतर्गत लोकसभा के माननीय अध्यक्ष श्री ओम बिरला जी दिव्य अखंड ज्योति शताब्दी वर्ष एवं वंदनीया माताजी के जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित ज्योति कलश यात्रा के मुख्य अतिथिस्वरूप पधारे।

इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने उनका स्वागत किया। माननीय लोकसभा अध्यक्ष ने विश्वविद्यालय में इस कार्यक्रम का शुभारंभ मृत्युंजय सभागार में पावन गणेश चतुर्थी के उपलक्ष्य पर किया। इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में माननीय ओम बिरला जी, उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन के उपाध्यक्ष डॉ० विनय रुहेला जी, शांतिकुंज के वरिष्ठ कार्यकर्त्ता, कुलपति जी एवं प्रतिकुलपति जी मुख्य रूप से उपस्थित रहे।

विशिष्ट अतिथियों द्वारा शक्तिकलश का पूजन करने के पश्चात विमोचन के क्रम में ज्योति कलश प्रज्ञागीतमाला, ज्योति कलश प्रज्ञागीत डाक्युमेंट्री एवं बाँग्ला गायत्री महाविज्ञान का विमोचन किया गया। कार्यक्रम का समापन गणेश जी की आरती के साथ किया गया।

ज्योति कलश यात्रा सम्मेलनों की शृंखला में छत्तीसगढ़, ओडिशा प्रांत को ज्योति कलश अर्पण करने हेतु आयोजित अगले सम्मेलन में छत्तीसगढ़ की महिला एवं बाल विकास मंत्री श्रीमती लक्ष्मी राजवाड़े जी मुख्य अतिथि के रूप में देव संस्कृति विश्वविद्यालय पधारीं।

इस अवसर पर शांतिकुंज महिला जाग्रति अभियान प्रमुख आदरणीया श्रीमती शेफाली पण्ड्या जी द्वारा श्रीमती लक्ष्मी राजवाड़े जी का स्वागत किया गया। मृत्युंजय सभागार में आयोजित इस कार्यक्रम में छत्तीसगढ़, ओडिशा प्रांत से आए हजारों गायत्रीसाधकों ने प्रतिभाग किया। कुलपति एवं प्रतिकुलपति, शांतिकुंज व्यवस्थापक एवं जोन से जुड़े पदाधिकारी एवं कार्यकर्त्ता इस आयोजन में उपस्थित रहे। कार्यक्रम में मौजूद विशिष्ट अतिथियों द्वारा ज्योति कलश का पूजन करने के पश्चात ज्योति कलश गीतमाला, छत्तीसगढ़ी—उड़िया भाषा में प्रज्ञागीत एवं ज्योति कलश डाक्युमेंट्री का विमोचन किया गया।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में व्याख्यानमाला का भी आयोजन हुआ। गुजरात के माननीय राज्यपाल आदरणीय श्री आचार्य देवव्रत जी का सपरिवार आगमन हुआ। विश्वविद्यालय आगमन पर प्रतिकुलपति जी ने राज्यपाल जी का स्वागत किया। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के परिसर के भ्रमण के क्रम में माननीय देवव्रत जी ने प्रज्ञेश्वर महादेव मंदिर में जलाभिषेक कर देश की सुरक्षा में अपना सर्वोच्च बलिदान देने वाले वीर सैनिकों की याद में बनी शौर्य दीवार में पुष्पांजलि अर्पित की और सैनिकों के सर्वोच्च बलिदान को नमन किया, तत्पश्चात प्रतिकुलपति जी ने एशिया के प्रथम बाल्टिक केंद्र, स्वावलंबन केंद्र सहित विश्वविद्यालय के विभिन्न प्रकल्पों की गतिविधियों से उन्हें अवगत कराया।

इस अवसर पर मृत्युंजय सभागार में व्याख्यानमाला का उद्‌घाटन मुख्य अतिथि माननीय आचार्य देवव्रत, कुलपति जी, प्रतिकुलपति जी एवं गुजरात प्राकृतिक खेती विज्ञान विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० सी०के० टिंबाडिया ने संयुक्त रूप से किया। समापन अवसर पर परमपूज्य गुरुदेव पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य शास्त्र प्रतियोगिता में विजेताओं को पुरस्कृत एवं आचार्य देवव्रत जी को स्मृतिचिह्न देकर सम्मानित किया।

हाल ही में 'शिक्षा से आत्मनिर्भर भारत' विषय पर दो दिवसीय प्रथम ज्ञानकुंभ समारोह का आयोजन देव संस्कृति विश्वविद्यालय में किया गया। इस कार्यक्रम के उद्‌घाटन सत्र में प्रतिकुलपति जी के साथ मुख्य अतिथि के रूप में माननीय शिक्षामंत्री डॉ० धनसिंह रावत जी, विशिष्ट अतिथि के रूप में शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास केंद्र के राष्ट्रीय सचिव डॉ० अतुल कोठारी जी एवं भारतीय विश्वविद्यालय संघ की महासचिव आदरणीया पंकज मित्तल जी उपस्थिति रहीं। इसके समापन के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में ले०ज० श्री गुरमीत सिंह जी, माननीय राज्यपाल, उत्तराखंड, प्रतिकुलपति, देव संस्कृति विश्वविद्यालय की गरिमामयी उपस्थिति रही।

कुछ दिनों पूर्व देव संस्कृति विश्वविद्यालय में सुल्तानपुर के विभिन्न विद्यालयों से आई हुई सैकड़ों बालिकाओं के लिए कन्या कौशल शिविर का आयोजन किया गया।

इस शिविर में सुल्तानपुर ग्रामीण इलाकों से 12 से 18 वर्ष की बालिकाओं को जीवन प्रबंधन, नारी सशक्तीकरण, समय प्रबंधन, प्रज्ञायोग, मानव उत्कर्ष आदि विषयों से अवगत कराया गया। कार्यक्रम के अंतिम दिवस में सभी बालिकाओं को प्रमाणपत्र प्रदान करते हुए प्रतिकुलपति जी ने विद्यार्थियों की जिज्ञासाओं का समाधान करते हुए अनेकों प्रश्नों का उत्तर भी दिया।

डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन की जयंती के शुभ अवसर पर राष्ट्रीय शिक्षक दिवस मनाया गया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के मृत्युंजय सभागार में सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में कुलपति जी एवं प्रतिकुलपति जी उपस्थित रहे।

परमपूज्य गुरुदेव के जीवन एवं भारत के इतिहास के अनन्य गुरुओं के जीवन से प्रेरणा लेते हुए गुरु-शिष्य परंपरा को विद्यार्थियों ने संगीत, नृत्य एवं लघु नाटिका के रूप में दरसाया। कार्यक्रम के अंतिम पड़ाव की ओर बढ़ते हुए परमश्रद्धेय कुलाधिपति महोदय डॉ० प्रणव पंड्या जी ने ऑनलाइन माध्यम से जुड़ते हुए गुरु-शिष्य परंपरा को बताया एवं उपस्थित समस्त सदस्यों को संबोधित किया। कार्यक्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के समस्त अधिकारियों, संकायाध्यक्षों, विभागाध्यक्षों, आचार्य-आचार्याओं, कर्मचारियों एवं छात्र-छात्राओं की उपस्थिति रही।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में ऋषिहुड विश्वविद्यालय, सोनीपत के समस्त विद्यार्थियों ने चार दिवसीय जीवन प्रबंधन कार्यशाला में भाग लिया। इस कार्यशाला में विद्यार्थियों ने आध्यात्मिक साधना के साथ-साथ स्वावलंबन और आत्मनिर्भरता के महत्त्व को समझा। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी के मार्गदर्शन में छात्रों ने गायत्री मंत्र की साधना के गूढ़ अर्थ और उसके जीवन में व्यावहारिक प्रयोगों का अनुभव किया। इसके अलावा छात्रों ने विश्वविद्यालय परिसर में स्थापित स्वावलंबन केंद्र, 'सृजना' (हस्तनिर्मित कागज निर्माण इकाई) और गोशाला का भी भ्रमण किया, जहाँ उन्होंने पर्यावरण संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की गतिविधियों को नजदीक से देखा।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने हाल ही में 'हमारी दुनिया को सुरक्षित करें: डेटा की सुरक्षा

और डिजिटल जीवन की सुरक्षा' शीर्षक पर दो दिवसीय साइबर सुरक्षा जागरूकता कार्यक्रम की मेजबानी की। कार्यशाला का आयोजन कंप्यूटर विज्ञान विभाग द्वारा किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन प्रतिकुलपति जी ने किया एवं उपस्थित विद्यार्थियों को इस अवसर पर यह संदेश दिया कि अगर हम चाहें तो हमारे पास दुनिया को बदलने की शक्ति और क्षमता है। साइबर अपराध के बारे में जागरूकता बढ़ाकर आप एक महत्त्वपूर्ण कदम उठा रहे हैं। यह कार्यक्रम पोस्टर-मेकिंग, वाद-विवाद, नारा निर्माण सहित और भी बहुत कुछ रोमांचक गतिविधियों से भरा हुआ था।

इसी क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय में संस्कृत एवं वेदाध्ययन और योग एवं स्वास्थ्य विभाग के संयुक्त तत्त्वावधान में 'पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य शास्त्र प्रतियोगिता' का आयोजन हुआ। इसमें सामूहिक रूप से हमारे आर्षग्रंथों के उच्चारण का क्रम रहा। प्रतिकुलपति जी ने इस अवसर पर कहा कि हमें संस्कृत के प्रसार हेतु यह पहल समूचे भारत में करनी चाहिए। आर्षग्रंथों का स्थान भारतीय परंपरा में सबसे ऊँचा है, यदि हम उनकी महत्ता को स्वीकारें तथा उनसे अपने जीवन को समुन्नत बनाने की दिशा में बढ़ें तो निश्चित ही भारत का भाग्योदय संभव है। अतः हम सभी की जिम्मेदारी है कि पूज्य गुरुदेव द्वारा रचित शास्त्रों को उनका सही स्थान मिले तथा समस्त जनसमुदाय उस वृहद ज्ञानकुंजी से परिचित हो सके।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय के पर्यटन विभाग द्वारा विश्व पर्यटन दिवस मनाया गया। इस अवसर पर विभाग द्वारा विगत 7 दिनों तक विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में पूरे विश्वविद्यालय के लगभग 300 से ज्यादा विद्यार्थियों ने प्रतिभाग किया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में प्रतिकुलपति जी उपस्थित हुए जिस दौरान प्रतिभागियों का उत्साहवर्द्धन करते हुए उन्होंने पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र वितरित किए।

इसी क्रम में राष्ट्रीय सेवा योजना दिवस के अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय में एक विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया। राष्ट्रीय सेवा योजना दिवस के अंतर्गत दो दिन तक विभिन्न प्रतियोगिताओं जैसे पोस्टर मेकिंग, कविता एवं निबंध लेखन आदि का आयोजन हुआ।

कार्यक्रम समापन के अवसर पर मुख्य अतिथि रूप में विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी उपस्थित हुए, जिन्होंने अपने उद्बोधन के दौरान एन० एस० एस० एवं अखिल विश्व गायत्री परिवार के आपसी लक्ष्य राष्ट्र की सेवा और योजना पर प्रकाश डाला। साथ ही आस-पास के महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय की नई इकाइयों के गठन हेतु देव संस्कृति विश्वविद्यालय को सौंपी गई जिम्मेदारी की सराहना की एवं बृहत्तर गायत्री परिवार की ओर से राष्ट्रीय सेवा योजना की पूरी टीम को ढेर सारी शुभकामनाएँ भी दीं।

इसी क्रम में दिल्ली के प्रसिद्ध फिल्म समीक्षक और यात्रा लेखक श्री दीपक दुआ जिन्हें हाल ही में सर्वश्रेष्ठ फिल्म समीक्षक के लिए 70वें राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया था, ने पत्रकारिता और जनसंचार विभाग के विद्यार्थियों के लिए आयोजित एक विशेष कार्यशाला को संबोधित किया।

प्रसिद्ध फिल्म पत्रिका के पूर्व सहसंपादक के रूप में श्री दुआ ने फिलम समीक्षा, फिल्म निर्माण और सिनेमा के विकास के विभिन्न पहलुओं पर अपना अनुभव साझा किया। कार्यशाला ने उपस्थित विद्यार्थियों को फिल्म आलोचना की दुनिया में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान की, जिससे उन्हें उद्योग की जटिल बारीकियों पर एक नया दृष्टिकोण मिला।

विगत दिनों सुप्रसिद्ध गायक, संगीतकार एवं अभिनेता श्री हिमेश रेशमिया जी का सपरिवार

आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी ने हिमेश जी का स्वागत करते हुए विश्वविद्यालय की अद्वितीय शैक्षणिक और सांस्कृतिक गतिविधियों पर चर्चा की। हिमेश जी ने भी विश्वविद्यालय के प्रयासों की सराहना करते हुए इसे समाज और शिक्षा के क्षेत्र में प्रेरणादायक संस्थान बताया।

इसी क्रम में विश्व हिंदू परिषद् के अध्यक्ष आदरणीय श्री दिनेश चंद्र जी का भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में प्रतिकुलपति जी द्वारा स्वागत किया गया। इस महत्त्वपूर्ण अवसर पर शिक्षा, संस्कृति और समाज के उत्थान के संदर्भ में गहन विचार-विमर्श हुआ। श्री दिनेश चंद्र जी ने विश्वविद्यालय द्वारा समाज और राष्ट्रनिर्माण के लिए किए जा रहे अभूतपूर्व कार्यों की प्रशंसा करते हुए कहा कि यह संस्थान आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगा।

20 वर्षों से अधिक व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में अनुभव रखने वाले जैक्सन इंडस्ट्री के श्री अनमोल शर्मा जी का आगमन देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ। इस अवसर पर उन्होंने विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी से सप्रेम भेंट की। भेंटवार्त्ता के दौरान शिक्षा और समाज सेवा के क्षेत्र में सहयोग के संभावित पहलुओं पर गहनता से चर्चा हुई, जो भविष्य के लिए प्रेरणादायक सिद्ध होगी।

हमीरपुर के जिलाधिकारी श्री राहुल पांडे जी एवं उनकी धर्मपत्नी, सुल्तानपुर की जिलाधिकारी कृतिका ज्योत्सना जी का भी सपरिवार देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आगमन हुआ, जहाँ प्रतिकुलपति जी ने उनका हार्दिक स्वागत किया। आगमन पश्चात उन्हें गायत्री परिवार एवं विश्वविद्यालय की गतिविधियों से परिचित करवाया गया।

विशिष्ट अभ्यागतों में वरिष्ठ पत्रकार सुश्री याना मीर का भी विश्वविद्यालय में आगमन एवं विद्यार्थियों से विमर्श का क्रम संपन्न हुआ। विशिष्ट अभ्यागतों के आगमन के इसी क्रम में हरिद्वार के नवनियुक्त जिलाधिकारी श्री कर्मेंद्र सिंह जी का भी आगमन हुआ। विंश्वविद्यालय पहुँचकर श्री सिंह जी ने प्रतिकुलपति जी से शिष्टाचार भेंट करते हुए गायत्री परिवार एवं विश्वविद्यालय का संक्षिप्त परिचय प्राप्त किया। स्वामी विवेकानंद विश्वविद्यालय, सागर के कुलाधिपति श्री अजय तिवारी जी का भी आगमन हुआ। इस अवसर पर उन्होंने प्रतिकुलपति जी से भेंटवार्त्ता की।

भारत-ब्रिटेन व्यापार के प्रमुख कार्यकारी अधिकारी रिचर्ड मैकुलम का भी विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन हुआ। दोनों देशों के पारस्परिक व्यापारिक संबंधों में अहम भूमिका निभाने वाले मैकुलम प्रतिकुलपति जी द्वारा प्रस्तुत किए गए देव संस्कृति विश्वविद्यालय के परिचय एवं गतिविधियों से अत्यंत प्रभावित थे। इसी क्रम में विदेश मंत्रालय की विशिष्ट शाखा आरआईएस के महानिदेशक डॉ० सचिन चतुर्वेदी जी ने भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय का हाल ही में दौरा किया। प्रतिकुलपति ने उनका स्वागत करते हुए उन्हें विश्वविद्यालय की शैक्षणिक और सांस्कृतिक उपलब्धियों से अवगत कराया।

शैक्षणिक गतिविधियों के क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने गुजरात नेचुरल फार्मिंग साइंस विश्वविद्यालय के साथ एक महत्त्वपूर्ण अनुबंध पर हस्ताक्षर किए। इस साझेदारी पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय प्रतिकुलपति जी और गुजरात नेचुरल फार्मिंग साइंस विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० सी० के० टिंबाडिया ने संयुक्त रूप से हस्ताक्षर किए, जिसका उद्देश्य प्राकृतिक खेती के क्षेत्र में अनुसंधान, शिक्षा और नवाचार को आगे बढ़ाने के साथ ही टिकाऊ कृषिपद्धतियों को बढ़ावा देना है, जिससे पर्यावरण और समाज, दोनों को बड़े पैमाने पर लाभ होगा। ❑

परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी

ज्ञान की गंगा का अवतरण

परमवंदनीया माताजी के व्याख्यानों की यह विशिष्टता रही है कि उनके उद्बोधन गायत्री परिवार के प्रत्येक परिजन को अपने जीवन की दिशा को निर्धारित करने का संकल्प एवं साहस प्रदान करते हैं। परमवंदनीया माताजी न केवल प्रत्येक साधक को साधना के पथ पर अग्रसारित होने का निमंत्रण प्रदान करती हैं, वरन वे हर परिजन को पूज्य गुरुदेव की तरह से भगीरथ बन ज्ञान की गंगा का अवतरण कर पाने का भाव भी पैदा करने को कहती हैं। वे कहती हैं कि हम पूज्य गुरुदेव के तपोमय जीवन से प्रेरणा प्राप्त करें और सन्मार्ग पर चलने का साहस पैदा करें। किसी भी साधक के जीवन का समग्र मूल्यांकन इस आधार पर हो पाता है कि उसके भीतर सत्पथ पर बढ़ने का जज्बा एवं साहस जन्म ले पाया या नहीं। वंदनीया माताजी हर परिजन को वही आत्मबल जगाने की प्रेरणा प्रदान करती हैं। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को..........।

कुछ करने का साहस पैदा करें

वहाँ मुरादनगर का लड़का बैठा है। उसकी फैक्टरी नहीं चल रही थी, कम चल रही थी, अरे! माताजी आ गईं। माताजी चला दो। बेटा! माताजी कोई मशीन हैं, जो माताजी चला देंगी मशीन को। तेरी भावना है और भगवान की कृपा हो जाए तो हो ही जाए, चल हो जाए।

जो बिलकुल ऐसी लग रही थी कि बंद होने वाली है, अब वह करोड़ों में जा रही है। मैंने कहा बस, तू खड़ा भर रह और फिर तू देख कमाल। चाहे तेरी और फैक्टरी बंद हो जाएँ, पर वह फैक्टरी बंद नहीं हो सकती। तेरी शुगर मिल नहीं बंद हो सकती, वह चलेगी।

व्यक्ति के अंदर कुछ कर गुजरने का साहस तो हो। साहस भी न हो, भावना भी न हो, तो फिर व्यक्ति जैसा-का-तैसा बौना-का-बौना ही रह जाएग बेटा, उसके व्यक्तित्व की कोई कीमत नहीं है। व कितना कमा रहा है, कितना बड़ा अफसर है या कौ है, क्या है? इसकी कीमत नहीं है।

बेटा इसकी कीमत तब तक है, जब त रिटायर्ड नहीं हो रहे हैं, तब तक दाएँ-बाएँ नौक भी हैं। फिर उतर गए तो कोई दो कौड़ी का न पूछेगा। बताइए फिर रिटायर्ड होकर क्या होगा फिर उसकी वैल्यू समझनी चाहिए। मनुष्य जीव की वैल्यू आप समझिए।

मैंने आपसे यह निवेदन किया कि आप मनु जीवन की वैल्यू समझिए और उसको किसी अच काम में लगाइए। आपके पास 24 घंटे होते हैं, 2 घंटे में 6 घंटे आप सो लीजिए और 8 घंटे या 6 घ आपके जीवन के उपार्जन के लिए हैं।

इससे ज्यादा तो आप काम क्या करेंगे? हमें मालूम है कितना काम करते हैं?

फाइल-की-फाइल पड़ी रहती हैं। सिवाय गपशप के और कुछ नहीं होता। सब मिलाकर 8 घंटे का काम 2 घंटे में हो सकता है। 2 घंटे से ज्यादा नहीं होता। लग करके आदमी काम करे, फिर काम रह जाएगा क्या, बिलकुल काम नहीं रह सकता।

अपना मूल्य बढ़ाइए

एक सज्जन थे। बहुत पुरानी बात मुझे याद आ गई। वे पाकिस्तान से आए हुए थे। उनका नाम लालचंद था। लालचंद मेहरा था, ऐसा ही कुछ नाम था उनका? मुझे ठीक याद नहीं आ रहा। वे एक बार गुरुजी के पास आए। उन्होंने यह कहा कि देख लालचंद ऐसा करना। उसने कहा—गुरुजी जो आप कहेंगे, वही मैं करूँगा।

उन्होंने कहा— बॉस के हाथ-पाँव तोड़ देने चाहिए। उन्होंने कहा गुरुजी बॉस के हाथ-पाँव हम तोड़ देंगे तो हमारा क्या हाल होगा? फिर तो हम नौकरी कैसे करेंगे? जेल में जाएँगे। यह मतलब नहीं है मेरा, मेरा मतलब समझ ले। मैं क्या कह रहा हूँ? मैं यह कह रहा हूँ कि जो उसका काम है, उसके काम को छीनने की कोशिश कर। छीनने का मतलब काम करने की कर्मठता होनी चाहिए।

उस समय बस वही ऑपरेटर थे, फिर ऑल इंडिया तार विभाग में चले गए। अब तो बेचारे चले गए होंगे, नहीं चले गए होते तो जरूर आते। वे खादी की धोती पहनते थे। खादी का दुपट्टा कंधे पर पड़ा रहता था, तो मैं भी यह कहती कि इसी वेश में आप सर्विस में जाते हैं? हाँ माताजी! मैं इसी वेश में जाता हूँ। धोती-कुरते में ही जाता हूँ, इज्जत भी होती है। जो कोई भी साहब आए, वही सब रिमार्क लगाते हैं। सबसे वे कहते रहते हैं, लाइए साहब! हम बाजार जा रहे हैं, आपका काम कर लाएँगे। उनकी यह बहुत बड़ी विशेषता थी।

गुरुजी सैनिक प्रेस में थे। जिस दिन सैनिक प्रेस उन्होंने छोड़ा, उस दिन सबके सब ऐसे रोने लगे, जैसे कोई अपने किसी प्रियजन के न रहने पर रोते होंगे।

राजा जनक की सभा में प्रवेश करते ही शुकदेव ने उन्हें प्रणाम किया। शुकदेव संन्यासी और जनक गृहस्थ थे। जिस कारणवश इस प्रतिकूल से लगने वाले आचरण पर सारी सभा विस्मित हो उठी। शुकदेव इस भाव को ताड़ गए। सभासदों के कुतूहल का समाधान करते हुए उन्होंने कहा—''विद्वानो! महाराज जनक ने अपने जीवन को ही योग बना लिया है, उनका प्रत्येक कर्म भगवान को, आदर्शों को समर्पित होता है। अतएव वे निस्संदेह सबसे बड़े योगी हैं।''

इस तरीके से रोते रहे, वे इतने जनप्रिय थे। उनको कभी अहंकार नहीं था। आप में से कभी कोई सज्जन उनसे मिले होंगे, पास में बैठाया होगा, पर यही नहीं मालूम पड़ा होगा कि यह गुरुजी हैं। इतने सादा, इतने सिंपल, कितने प्यार से बात कर

रहे हैं, कैसे दुलार रहे हैं? अपने पास बैठा लेते। चारपाई में बैठे हैं, कभी उनको अपने अंदर यह अहंकार नहीं आया कि हम कहाँ बैठें, कैसे बात करें? जैसे में हैं, वैसे बात करेंगे। बनियान पहने बैठे हैं तो उनको कभी ऐसा नहीं लगता था।

इसी तरीके से मैं आपको उनका उदाहरण सुना रही थी। उन्होंने जो मंत्र दिया, उन्होंने कहा कि यह मंत्र है, आप मंत्र समझ लें और इसको इस्तेमाल करें। वही इस्तेमाल किया और जो कोई भी आते गए, अक्सर वही रिमार्क लगाते हुए चले गए। इस लालचंद को मत भूलना, यह बड़े कमाल का लड़का है। यह बहुत ही सज्जन है, ईमानदार है। यह बहुत प्यारा लड़का है। जो गए सो ही लगाते गए। ऊँचा उठता हुआ चला गया। कहाँ-से-कहाँ तक पहुँच गया। कैसे पहुँच गया? अपने पुरुषार्थ से और अपनी भावना से।

भावनाशून्य न बनें

भावनाशून्य व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता। भावनाशून्य तो शासन कर सकता है, सख्ती बरत सकता है, पर किसी को अपना नहीं बना सकता। सख्ती से अपना नहीं बनता, मुलायमियत से अपना बनता है, प्यार से अपना बनता है। यह सारी-की-सारी भीड़ इतनी दिख रही है, इतनी लाखों की जो भीड़ है उन्होंने क्या दिया? उन्होंने प्यार दिया, भावनाएँ दीं। उन्होंने सिद्धांत दिए और उन्होंने साहित्य दिया। दिमाग की धुलाई के रूप में जो काम करे, उन्होंने उस साहित्य की रचना की।

चारों वेदों से लेकर 108 उपनिषद्, 6 दर्शन, 18 पुराण लिखे और आपकी अखण्ड ज्योति, युग निर्माण योजना ये सब उन्हीं के तो हैं और इतना सब कुछ वे लिख करके रख गए। अब तो केवल खाने की बारी है। केवल खाना भर है, आपको पकाना नहीं है, खाना है और खिलाना है। इसको खाइए भी और खिलाइए भी।

भावनाओं में एकता

आज उनकी तीसरी पुण्यतिथि है। आपको याद होगा कि मैंने एक बात यह कही थी कि कइयों ने यह कहा कि आप और गुरुजी में अंतर है? हाँ, मैंने कहा अंतर है, जरूर अंतर है। उम्र में अंतर है, लेकिन भावनाओं में अंतर नहीं है, सिद्धांतों में अंतर नहीं है। सुकन्या थी और च्यवन ऋषि थे। च्यवन ऋषि तपश्चर्या कर रहे थे और मिट्टी का ढेर उनके सर तक चला गया था। केवल आँखों का हिस्सा बचा था। उस सुकन्या के द्वारा दोनों आँखों को क्षति पहुँची। मालूम है सुकन्या ने क्या किया? सुकन्या ने कहा कि यह ऋषि हैं, ये संत हैं, ये भगवान हैं, इनको मैं वरूँगी और मैं इनकी आँखें बनूँगी, मैं इनकी लाठी बनूँगी, मैं इनके साथ-साथ चलूँगी।

ऐसा तो मैंने कुछ नहीं किया, लेकिन मेरी भावनाएँ हैं, मेरी विचारणा है और मेरा सिद्धांत कम नहीं है। उसूलों के लिए मर मिटना भी मुझको आता है। भावुक भी बहुत हूँ और कठोर भी बहुत हूँ। भावुक भी इतनी हूँ कि मैं किसी का दुःख, पीड़ा नहीं देख सकती, लेकिन यह सारा दृश्य मैं देखती रही और मैं पाषाण के तरीके से बैठी भी रही।

वे कहा करते थे कि मैं नहीं रहूँगा तो तुम जिंदा नहीं रहोगी। मालूम है कि तुम जरूर कोई कदम ऐसा उठाओगी। तुम ऐसा कोई कदम नहीं उठाओगी, यह मुझे वचन दो। मैंने कहा कि नहीं! जो आप कह रहे हैं वही होगा। उन्होंने कहा कि रामकृष्ण परमहंस की पत्नी ने 30 साल तक मिशन की सेवा की थी और तुम वादा करो कि इस मिशन की सेवा करोगी। मैंने कहा यह मेरा परम कर्त्तव्य है और मेरा धर्म है, आपने जो कहा है, उसको मैं जरूर पूरा करूँगी।

चलते समय मैंने उनसे एक ही चीज माँगी कि मुझे आप शक्ति देना बस, और कुछ मुझे नहीं चाहिए। आपकी शक्ति मेरे साथ है, मेरे अंतरंग में विराजमान है तो फिर मैं कर दिखाऊँगी। तो फिर एक माँ को जो करना चाहिए, तो माँ की हैसियत से इतना बड़ा परिवार जो आप बना करके गए, अपने बच्चों को, परिवार को मैं सँभाल लूँगी।

वे कहते भी थे कि माताजी तो रानी मक्खी हैं, इतना बड़ा परिवार है इनका। कभी विनोद में कहा करते थे तो मैंने कहा कि आपने तो विनोद में कहा था और मैं इसको करके दिखा दूँगी। शरीर नहीं चलेगा तब भी इसको डंडे मार-मार करके चला लूँगी और मैं चलाती भी हूँ। इस उम्र में चलने में परेशानी होती है, पर मैं कहाँ-से-कहाँ धावा भरती रहती हूँ।

हमारा मनोबल अटूट है

अश्वमेध यज्ञ हो रहे हैं, मैं कभी घर से निकली थी ? मैं कभी घर में से नहीं निकली। उनके साथ ही कभी गई थी। कभी गुजरात वगैरह जहाँ कहीं भी कार्यक्रम हुए। हजार कुंडीय यज्ञ हुए थे, वहाँ-वहाँ मैं सब जगह उनके साथ गई थी। अकेला जाना मैंने पसंद कभी नहीं किया। मैं कभी नहीं गई, लेकिन अब मैंने कहा कि नहीं जहाँ भी अश्वमेध यज्ञ होंगे, वहाँ जरूर जाऊँगी। चाहे यहाँ हों या विदेश में हों, कहीं भी हों, पर मैं जरूर जाऊँगी।

बच्चों ने कहा मत जाइए आपकी स्थिति ऐसी नहीं है कि आप जाएँ। हमने कहा स्थिति क्या होती है ? किस चिड़िया का नाम है ? हमारे अंतरंग में साहस है। हर स्थिति में तुम हमारा मनोबल गिरा रहे हो ?

हमारे मनोबल को गिराओ मत। हम जाएँगे, हर जगह जाएँगे और हर जगह ही पहुँच रहे हैं। चार जगह तो हो आए और तीन जगह अभी-अभी जा रहे हैं। लंदन जा रहे हैं, टोरण्टो जा रहे हैं, अमेरिका जा रहे हैं और फिर अपने यहाँ के हो गए, लखनऊ का हो गया और आपका नागपुर का हो गया, जाने कहाँ-कहाँ के हो गए, ढेरों हो गए। पूरे साल के बुक हैं, उसमें जाना पड़ेगा। हाँ कह दिया है तो जाना ही पड़ेगा या तो हम कहते ही नहीं, जबान से निकालते ही नहीं। वह तीर है, निकल गया तो निकल गया, अब वापस तो होता नहीं। भाई हम तो वापस नहीं करेंगे। हम तो अब जाएँगे, सब जगह जाएँगे। इसी उत्साह से आप भी जहाँ कार्यक्रम हो रहे हैं, वहाँ पूरे उत्साह के साथ पूरे कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिए काम करेंगे, यह मुझे उम्मीद है।

जब आपकी माँ का साहस कम नहीं हुआ है तो बेटों का, बेटियों का क्यों होना चाहिए ? आप में से कितनों के लिए कितने स्वप्न उन्होंने सँजोए थे कि इनमें से कितने एकलव्य बनेंगे, कितने विवेकानंद बनेंगे और कितनी ये लड़कियाँ सिस्टर

मन्यते पापकं कृत्वा
न कश्चिद्वेत्ति मामिति।
विदन्ति चैनं देवाश्च
यश्चैवान्तः पुरुषः ॥

अर्थात पापी मनुष्य पाप करके यह सोचता है कि मेरा पाप कोई नहीं जानता। पर उसके पाप को न केवल देवता जानते हैं, बल्कि सबके हृदय में स्थित परमपिता परमेश्वर भी जानते हैं।

निवेदिता बनेंगी? उन्होंने केवल कल्पना ही नहीं की थी, श्रम भी तुम्हारे लिए किया है।

ऐसे ही बन करके दिखाओ, इन लड़कियों को भी महिला जागरण के लिए जो समय इनका बचता है, 1 बजे से 3 बजे तक का, उसमें 2-3 घंटे यह महिला जागरण का काम कर सकती हैं। इनको साक्षरता सिखा सकती हैं और अपने मिशन की जो कार्यप्रणाली है उनको बता सकती हैं। गृह उद्योग बता सकती हैं।

नारी का सम्मान करें

इस तरीके से इन महिलाओं को भी निकलने दो। इनको काम की गुड़िया मत बनाओ। गुड़िया बनाकर के घर में मत बिठा लो। जैसे तुम हो, वैसे ही ये हैं। नहीं साहब! नर में और नारी में तो अंतर है। क्या अंतर है। तुम कमाते हो, यही अंतर है न, इसीलिए धौंस जमा रहे हो, इसीलिए उसके ऊपर साहबजादे बन रहे हो? अरे! वह घर में कमाती है। यदि घर को सँभाल के न रखे तो सारा सत्यानाश हो जाए, बिलकुल चौपट हो जाए। ला खाना पकाने वाली, ला कपड़े धोने वाली, झाड़ू वाली लाओ और आपकी सेहत की देख-भाल करने वाली लाओ, डॉक्टर लाओ, लाओ इतना?

कितना खरच होगा, जरा बताना? और चूल्हे-चौके पर जो पैसा खरच होता है, उसमें से बचाती रहती है और भी अपव्यय होता है, उसमें से भी बचाती है। उसके लिए कोई और बचाएगी? पत्नी बचाती है। आप जानते नहीं हैं कि पत्नी पति से ज्यादा कमाती है। क्यों वह कमाती नहीं है? आपने तो उसके सिर पर वे दायित्व रख दिए हैं—बच्चा-बच्ची का पालन करने का।

एक तो वे सब हैं, साथ में बच्चे-कच्चे और। जो पति है वह भी एक बच्चे से ज्यादा है। बच्चों में तो तमाचा लगा करके तब भी ठीक कर दे, पर उस देवता से तो कुछ कह भी नहीं सकते सिवाय उसको सुनने के, एक शब्द भी मुँह में से नहीं निकाल सकती। लो जी अच्छा तुमने यह समझ लिया कि यह एक नौकरानी है? तुम नौकरानी खरीद के लाए हो? अरे! इसके माँ-बाप ने बाइज्जत आपको इसे दिया है, इज्जत से दिया है और तुम्हारी तो गरदन नीची होनी चाहिए; क्योंकि दहेज में पैसा लिया है।

आपने दहेज में पैसा लिया है, इसलिए आप खरीदे हुए गुलाम हो। वास्तव में जो काम पत्नी करती है, वह काम आप लोगों को करना चाहिए। इसलिए करना चाहिए कि उस बेचारी ने सब दिया है। आपने कुछ दिया नहीं, इस तरीके से बेटा नर और नारी दोनों एक हैं। दोनों को एकदूसरे का पूरक होना चाहिए। उनको पूरक बनाओ, नहीं तो बिलकुल गई-गुजरी स्थिति में हो जाएँगी। उनको गई-गुजरी स्थिति में न रखो, कम-से-कम हमारे गायत्री परिवार के जो हैं, वे तो कम-से-कम इस बात को अच्छी तरीके से समझ लें कि गुरुजी ने कभी किसी को अपने से छोटा नहीं माना।

हम में से कभी भी न मेरे अंदर यह भाव आया कि वे मुझसे बड़े हैं और न उनको कभी मेरे प्रति यह भाव आया कि मुझसे छोटी हैं। कभी भी नहीं आया। वे हमेशा माताजी ही कहते रहे, अकेले में भी कहते रहे, सबके सामने भी कहते रहे— उन्होंने कहा कि इनके अंदर माँ की जैसी ममता है, इसलिए मैं इनको माताजी कहता हूँ और सब लोग माताजी तो कहेंगे ही, पर वे स्वयं कहते थे। बेटा! इतना बड़ा सम्मान देना हर किसी के बूते की बात नहीं है।

आप माँ नहीं कह सकते तो कम-से-कम बराबर के तरीके से तो रहने दीजिए। उसको जरा साँस तो लेने दीजिए। आप तो साँसों पर भी प्रतिबंध लगाते हैं। आप तो उसको बिलकुल दबा के रखना चाहते हैं। मार-पीट करके रखना चाहते

हैं। तो आप कौन हैं जो मारेंगे-पीटेंगे? उसके हाथ में डंडा दे दो, फिर तुमको होश में न कर दे तो कहना।

एक लड़का था। यहाँ शायद बैठा हो, कहीं हो तो सुन रहा होगा। वह अपनी पत्नी को जरा पीट-पाट के आया। पत्नी आई और बोली कि देखिए माताजी! मेरे यहाँ लग गई, वह नहीं मानता। मैंने कहा अच्छा! मैंने उसे अपने पास बुलाया। मैं हाथ नहीं उठाती। पहले तो उसको बुला करके अपने पास बैठाया और फिर मैंने उसके गाल पर तीन-चार तमाचे जमाए। मैंने अच्छी तरह से बताया कि बेटा जी कैसा लगा तुझे।

अब वह तो कुछ समझ भी नहीं पाया कि मुझको तमाचे क्यों पड़े? मैंने कहा बता कि तूने अपनी औरत के साथ में ऐसा क्यों किया, बता उसको क्यों मारा? कोई चौपाया है? आखिर वह कौन है, इसके ऊपर तूने हाथ क्यों उठाया? अब आगे हाथ उठाया तो तेरे हाथ को तोड़ दूँगी। आज तो चार तमाचे पड़े हैं और अब की बार आएगा तो अच्छी तरह से डंडा पड़ेगा।

माँ के बच्चों के लिए शब्द

मैंने आपसे एक ही निवेदन किया। मैंने थोड़े कड़े शब्द कह दिए, ताकि आपके दिल और दिमाग खुल जाएँ, इसलिए मैंने कड़े शब्द कहे हैं। मुझे आप लोग बहुत प्यारे लगते हैं। मेरे बच्चे हैं, मेरी बच्चियाँ हैं, तो मुझे प्राणों से भी ज्यादा प्रिय हैं। मैं इनके लिए कड़े शब्द क्यों कहूँ? पर कभी-कभी कहने भी पड़ते हैं। उनको सही रास्ते पर चलाने के लिए कुछ तो करना ही पड़ता है। आपको एक दिशाधारा देने के लिए मैंने कुछ शब्द ऐसे भी कहे हैं, जो मुझे नहीं कहने चाहिए, पर मैं कह गई इस नाते से कि एक माँ बैठी है और आप बच्चे बैठे हैं। बच्चे बैठे हैं तो सुनेंगे ही और क्या करें इसलिए मैंने आपसे कहा है।

आज बहुत भावनापूर्ण पर्व है। गायत्री जयंती और गुरुजी की पुण्यतिथि है। दोनों दृष्टि से यह पर्व हमारे जीवन में बहुत महत्त्व रखता है। ये अंतरंग में जाने का पर्व है। बाहरी नहीं, वरन अंतरंग में विचार करने का है कि हमको क्या करना चाहिए? उनकी यह पुण्यतिथि है। आइए, हम सब उनके लिए श्रद्धा-सुमन चढ़ाएँ और एक गीत है, उसको मैं आपके सामने प्रस्तुत करूँगी—

मेरी अनंत आत्मा का यह विश्वास है,
मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है।
कितने युग बीते इस दासी को राह में,
फिर भी आई न कमी अपनी इस चाह में।
अब भी तो महामिलन की निश्चित आस है,
मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है।
मेरा भगवन् तो कालदर्शी और युगद्रष्टा,
वही मेरा स्वर्णिम अतीत है।
वही तो मेरे वर्तमान का हास है,
मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है।
वह बसता है तन में, मन में और आत्मा में,
जो कुछ उसमें वह नहीं इसी परमात्मा में।
वही मेरे जीवन का पूर्ण विकास है,
मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है।
साँसों में जीवित है बंदी है प्राण में,
बनकर सुवास छाया रहता है प्राण में।
तन में चेतन का मन में मधुमय वास है,
मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है।
सुख में वह हँसता साथ मेरे दुःख में रोता,
वह नित प्रातः उठता साथ-साथ ही है सोता।
ममता का हाथ और करुणा का विश्वास है,
मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है।
है अंतिम चाह पूरी भी हो ही जाएगी,
यह आत्मा अंतिम गति उसमें ही पाएगी।
मेरी सरिता को सागर का विश्वास है,

मेरा उपास्य तो प्रतिक्षण मेरे पास है। बादल बरसते हैं तो पक्षपात नहीं होता है,

जहाँ तालाब होता है, तालाब भर जाता है। जहाँ कहीं गड्ढा होता है, गड्ढा भर जाता है। समतल जमीन होती है तो समतल पर बह जाता है। कटोरा-कटोरी होते हैं तो वह जितनी उनकी पात्रता है, उतना उसमें जल आता हुआ चला जाता है।

उनकी करुणा, उनकी दया, उनकी ममता, उनकी उदारता, उनकी सहजता का द्वार हमेशा-हमेशा के लिए खुला हुआ है। जो भी आएगा, वह सब इसको पाएगा। मैं ही अधिकारी नहीं हूँ, आप भी अधिकारी हैं। मैं अधिकारी और तरीके से हूँ। वे मेरे पति भी थे और मेरे भगवान भी थे। मैंने भगवान को नहीं देखा। भगवान तो बोलता भी नहीं है, वे भगवान तो बोलते भी थे।

वे मार्गदर्शक भी थे, वे प्रेरणा भी थे। मैं उन्हें गुरु भी कहती हूँ, गुरुजी भी कहती हूँ। क्या मतलब है, क्यों कहती हूँ गुरुजी ? इसलिए कहती हूँ कि हर पल, हर समय उनकी प्रेरणा मुझको मिलती रहती है। कोई भी क्षण ऐसा नहीं होता, जिस क्षण मुझको ऐसा लगता हो कि वे मेरे पास नहीं हैं। मुझे दिखाई भी पड़ता है। आप यह कहेंगे कि आपका दिमाग खराब हो गया। आप पागल हो गई हैं, इसलिए आप ऐसा कहती हैं।

नहीं, बेटा मैं पागलपन नहीं दिखाती, किसी को मैं यह नहीं कहती और कोई कहता है, तो मैं उसको झिड़क देती हूँ; लेकिन मेरी आँखें देखती रहती हैं और मेरी अंतरंग की जो आँखें हैं, वे हर समय अपने समीप अपने उपास्य को, अपने आराध्य को पाती हैं।

इसी तरीके से भगवान करे आपका उपास्य, आपका आराध्य भी आपके समीप ऐसे ही रहे, जैसे वे मेरे समीप रहते हैं, वैसे ही आपके समीप भी रहें। इन शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करती हूँ।

।। ॐ शांतिः ।।

सत्संग में एक चोर गलती से पहुँच गया। उसके पिता ने हजार बार समझाया था कि कभी किसी सत्संग में मत जाना, मालूम नहीं, संत क्या सीख दे डाले— अपना तो धंधा ही चौपट हो जाएगा। पर वह क्या करता, सिपाही पीछे लग गए थे। मात्र सत्संग में ही वह छिप सकता था।

पंडित जी कथा सुना रहे थे। उन्होंने बताया कि जंगल के भूतों के पास खजाना होता है। यह तो कथानक का एक अंश था, पर उसे यही याद रह गया। उसने लक्षण भी सुन लिए कि वह कैसा होता है। बड़ी आलंकारिक शैली में कथावाचक ने सुनाए थे। पूरी लगन के साथ चोर जंगल में घुसा और वह खजाना ढूँढ़ लाया।

पंडित जी महाराज कथा पूरी कर घर जा रहे थे। वह चरणों में गिरा और बोला— ''महाराज! थोड़ा आप रख लो। आपकी कृपा से इतना सारा धन एक ही जगह मिल गया।'' पंडित जी अवाक् रह गए। फिर बोले—''यह तो नकली खजाना है। असली खजाना तो आत्मा के पास है। तू वहाँ तक पहुँच।'' चोर ने चोरी छोड़ दी एवं पूरी तरह बदल गया। धोखे से किया गया सत्संग भी क्या कुछ करा देता है।

साधना शताब्दी—विशिष्ट लेखमाला

वन-उपवन में जीवन का प्रकाश

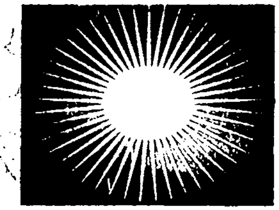

वन-उपवन में जीवन का प्रकाश नवयुग की भवितव्यता है। वन-उपवन व जीवन एक-दूसरे का परिचय एवं पर्याय हैं। वन के बिना जीवन की कल्पना संभव नहीं है; क्योंकि जीवन के लिए जरूरी साँसें तो वनों से ही मिलती हैं। जो मिट्टी हमें खाद्यान्न देती है, उसका संरक्षण ये वन ही करते हैं। वर्षा के जल का, मेघों के साथ पर्जन्य को निमंत्रण वन ही देते हैं। इसके अलावा वन का प्रत्येक पेड़ अपने पत्तों, फूलों-फलों, टहनियों, तनों एवं जड़ों के द्वारा हम सबको जितने तरह के लाभ पहुँचाता है; उसकी गणना तो शायद किसी के द्वारा संभव ही नहीं है।

प्रकृति के वृहद् परिवार में एक वृक्ष ही हैं, जो जीवित रहने पर जितने उपयोगी एवं सहयोगी हैं, उतना ही मृत होने पर हम सबके लिए सहयोगी व उपयोगी बने रहते हैं। इन सब तथ्यों का विस्मरण करके वनों का अंधाधुंध कटाव करके हम मनुष्यों ने पर्यावरण-पारिस्थितिकी के साथ स्वयं को भी संकट में डाल दिया है। इस परिस्थिति में जीवनदाता वन अब स्वयं के जीवन की याचना कर रहे हैं।

जीवन के संदर्भों को जानने वाले इस सत्य से अवगत हैं कि प्रकृति के परिवार में वन हमारे बड़े भाई हैं। प्रकृति ने सबसे पहले ऊर्जा देने वाला सूर्य बनाया, फिर धरती बनाई। इसके बाद धरती पर विभिन्न तरह के जलस्रोत बने, इसके बाद जीवों के जीवन का विष पीकर उन्हें साँसों का अमृत देने वाले वन उत्पन्न हुए, बाद में अन्य प्राणी आए और तब जीवन के लिए सभी उपयोगी सुविधाओं व संसाधनों का निर्माण हो जाने के बाद मनुष्य का अस्तित्व आया। प्रकृति ने अपने परिवार के इस सबसे श्रेष्ठ व समझदार सदस्य को उसके अस्तित्व के साथ अनेकों महत्त्वपूर्ण दायित्व सौंपे थे, जिसे इसने भुला दिया। सहजीवन की बातें उसे भूल गईं और अपने ही मन के अँधेरों के कारण उसने वनों का विनाश करके स्वयं के जीवन पर आफत ला खड़ी की।

युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव ने कभी अखण्ड ज्योति के पृष्ठों पर लिखा था कि 'मानव ने अपनी विकृत सोच एवं विकृत जीवनशैली के कारण असंख्य अपराध कर डाले हैं। वनों का विनाश उनमें से एक महापराध है।' यदि मानव के इन विभिन्न अपराधों के लिए विधाता दंड सुनिश्चित करे, तो उसे धरती पर कई बार प्रलय लानी पड़ेगी। लेकिन ऐसा होने पर मनुष्यों के अपराध का दंड असंख्य निरपराध प्राणियों व वनस्पतियों को भोगना पड़ेगा।

वनों का अंधाधुंध कटाव करके हम मनुष्यों ने पर्यावरण-पारिस्थितिकी के साथ स्वयं को भी संकट में डाल दिया है। इस परिस्थिति में जीवनदाता वन अब स्वयं के जीवन की याचना कर रहे हैं।

इसलिए विधान यह बना है कि परम प्रकाश-परमात्मा का कोई अंशधर मनुष्यों का वंशधर बनकर मनुष्यों के किए हुए का बोझ अपने सिर उठाए। कठिन व घोर तप करके अब तक किए गए सभी मानव-अपराधों के लिए समुचित व

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

सम्यक प्रायश्चित करे। उसे फिर से जीवन जीना सिखाए। प्रकृति व परमात्मा के साथ की अनुभूति प्रदान करके जीवन के अर्थ व मर्म समझाए। पूज्य गुरुदेव द्वारा लिखी गई ये पंक्तियाँ स्वयं ही उनके शतवर्षीय तप का एवं गायत्री परिवार के उदय व विस्तार का अर्थ व मर्म स्वतः बता-समझा देती हैं।

इस शतवर्षीय तप से जो समाधान उपजने वाले हैं, उनमें वन-उपवन में जीवन का प्रकाश भी एक है। हममें से हर कोई जानता है कि यह समस्या किसी एक देश की नहीं, समूची धरती की है। विश्व में वनों का वर्गीकरण- वर्षावन, टैगा, शीतोष्ण दृढ़ लकड़ी वन एवं उष्ण कटिबंधीय शुष्क वन के रूप में किया गया है। बात गणना की करें, तो विश्व के प्रमुख वनों में (1) क्वींसलैंड का डैनट्रीवन, (2) दक्षिण अमेरिका में अमेजन के वर्षा वन, (3) मोंटे क्रिस्टो क्लाउड फॉरेस्ट, (4) चपाडा डॉस वेडेडरोस और एभास राष्ट्रीय उद्यान, (5) अलास्का बैककंट्री वर्षावन, (6) श्रीलंका का सिंहराजावन, (7) किनाबालु राष्ट्रीय उद्यान, (8) मोंटेवेर्डे रिजर्व, (9) सापो राष्ट्रीय उद्यान, (10) इक्वाडोर के बादल वन, (11) भारत का सुंदरवन है।

विश्व से भारत की ओर ध्यान केंद्रित करें, तो भारत में पाए जाने वाले वनों के प्रकार कुछ इस तरह से हैं—शुष्क सदाबहार वन, मैंग्रोव वन, सदाबहार वन, नम प्रणपातीवन, शंकुधारी वन, कांटेदार वन, अर्द्धसदाबहार वन एवं आद्र सदाबहार वन। इसी के साथ समूचे देश के सभी राज्यों में पैंतालीस 45 संरक्षित क्षेत्र हैं, जिनमें से पश्चिम बंगाल का सुंदरवन 10,000 वर्गकिलोमीटर के परिक्षेत्र में व्याप्त है। इसकी गणना विश्व के कुछ गिने-चुने वनों में होती है।

वन-उपवन एवं जीवन के प्रसंग में सबसे अचरज की बात तो यह है कि अरण्य संस्कृति के अनुयायी हम भारतवासी भी वनों के महत्त्व को भूल गए। अगर विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ वेदों की बात करें, तो ऋग्वेद के दशम मंडल का 146 वाँ सूक्त अरण्य की अधिष्ठात्री 'अरण्यानी' को समर्पित है।

ये अरण्यानी ही पुराणों में वनदेवी के रूप में वर्णित हैं। ये वन, वनवासियों, वन के सभी प्राणियों, वनस्पतियों की माता हैं। वेदों के साथ प्रायः सभी पुराणों में वन-उपवन का महत्त्व दरसाया गया है। वेदों एवं पुराणों में वन के लिए कई अन्य शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं, जैसे कि 1. वन, 2. अरण्य, 3. कानन, 4. अटवी, 5. उद्यान, 6. उपवन, 7. वाटिका। इनमें से उद्यान, उपवन एवं वाटिका मानव निर्मित वनों के लिए प्रयुक्त हुए हैं। परिक्षेत्र के हिसाब से इन्हें ये नाम दिए गए हैं। उपवन इनमें से सबसे बड़ा, उद्यान सबसे छोटा और वाटिका सबसे छोटी बताई गई

इसलिए विधान यह बना है कि परम प्रकाश-परमात्मा का कोई अंशधर मनुष्यों का वंशधर बनकर मनुष्यों के किए हुए का बोझ अपने सिर उठाए। कठिन व घोर तप करके अब तक किए गए सभी मानव-अपराधों के लिए समुचित व सम्यक प्रायश्चित करे। उसे फिर से जीवन जीना सिखाए। प्रकृति व परमात्मा के साथ की अनुभूति प्रदान करके जीवन के अर्थ व मर्म समझाए। पूज्य गुरुदेव द्वारा लिखी गई ये पंक्तियाँ स्वयं ही उनके तप का एवं गायत्री परिवार के उदय व विस्तार का अर्थ व मर्म स्वतः बता-समझा देती हैं।

है। इसी तरह से वन, अरण्य, कानन एवं अटवी का नामकरण वृक्षों की सघनता के आधार पर है।

पुराणों में हमें विविध वनक्षेत्रों की चर्चा मिलती है—1. दंडकवन, 2. देवदारुवन, 3. माधव वन, 4. वृंदावन, 5. शालवन, 6. शिखंडीवन, 7. सैंधवारण्य, 8. हैतुक वन, 9. रक्तकानन क्षेत्र, 10. श्वेतारण्य, 11. भिल्ली वन, 12. बहुलोदक शाडवल वन, 13. नील देवदारु वन, 14. परिजात वन, 15. चैत्ररथ वन, 16. अरविंद वन, 17. चंपक वन, 18. द्वैतवन, 19. धर्मवन, 20. महाकाल वन, 21. सुप्रतीक वन, 22. खांडव वन आदि अनेकों वनक्षेत्रों में प्रमुख हैं। पुराणकथाओं में वन एवं वृक्षों को सचेतन माना गया है। वृक्षों में आत्मा होने की बात पौराणिक प्रसंगों में कही गई है। ऐसा ही एक प्रसंग महाभारत में है। इसमें कहा गया है—

एवं चतुर्विधां जातिमात्मा संसृत्य तिष्ठति।
स्पर्शैनैकेन्द्रियेणात्मा तिष्ठत्युद्भिदजेषु वै॥

उद्‌भिज यानी वृक्ष, वनस्पतियों में आत्मा केवल स्पर्श इंद्रिय से अपने को व्यक्त करती है।

वैज्ञानिकों ने वृक्ष-वनस्पतियों में सुख-दुःख के अनुभव की बात कहने में भले ही सहस्राब्दियों की देर लगाई हो, लेकिन भारत के महर्षियों ने यह सत्य युगों पहले ही कह दिया था—

सुखदुःखयोश्च ग्रहणाच्छिन्नस्य च विरोहणात्।
जीवं पश्यामि वृक्षाणां अचैतन्यं न विद्यते॥

—महाभारत शांतिपर्व 184/17

वृक्ष सुख-दुःख का अनुभव करते हैं। उनमें भी जीव का जीवन है। उनमें मिलने-बिछड़ने की अनुभूति है। उनमें अचेतना नहीं है। सच तो यह है कि मनुष्य के साथ वृक्षों का आंतरिक सादृश्य है।

श्रीमद्‌भागवतपुराण में वृक्षों के छह भेद भी गिनाए गए हैं—1. वनस्पति, 2. लता, 3. औषधि, 4. त्वक्‌सार जैसे कि बाँस, 5. वीरुध एवं 6. द्रुम। इस विवरण वर्गीकरण के साथ संस्कृत एवं संस्कृति साहित्य में वृक्ष-विद्या का भी विस्तृत विवरण मिलता है। इसमें भूमि की प्रकृति के साथ वृक्षों की प्रकृति का संयोग-सुमेल, इन्हें उगाने की विधि, इनके विविध अंगों के उपयोग का विस्तारपूर्ण वर्णन है। वृक्षविद्या में वानिकी के साथ इनका प्राकृतिक व आर्थिक परिदृश्य भी विस्तार से बताया गया है। वृक्ष-विद्या में अचरजपूर्ण आयाम यह भी है कि वृक्ष-वनस्पतियों से जुड़ी अध्यात्म विद्या एवं वास्तुशास्त्र का भी व्यापक वर्णन है।

वृक्षों से जुड़ी अध्यात्म विद्या में यह बताया गया है कि किस वृक्ष-वनस्पति में किस देवशक्ति का वास है एवं उसे कहाँ पर रोपा जाना चाहिए। घर के आस-पास कौन से वृक्ष-पादप किस ढंग से रोपे जाने चाहिए। जैसे कि कँटीले वृक्षों को घर की दक्षिण दिशा में लगाया जाना चाहिए। इसी के अंतर्गत वृक्षों से जुड़ी तिथियाँ, ग्रहों व नक्षत्रों के वर्णन के साथ वृक्षमहोत्सव मनाए जाने का भी विधान है।

वृक्षों से जुड़े वास्तुशास्त्र में यह बताया गया है कि द्वार, तोरण व मंडप के लिए किस-किस वृक्ष की लकड़ी किस माप में उपयुक्त होती है। पुराणों में मत्स्य, विष्णु, अग्नि, नारद एवं धर्मोत्तर पुराण में वृक्षों से जुड़ी वास्तुविद्या की चर्चा है। इनमें यह भी बताया गया है कि भगवान शिव के स्वेद बिंदु से 'वास्तु पुरुष' का जन्म हुआ। इसमें यह भी बताया गया है कि किस तरह मनुष्य अपने जन्म से मृत्यु तक वृक्षों व वनों से सघनता से संबंधित है।

आज के वर्तमान में इस सत्य को स्वीकारने, समझने व समझाने की जरूरत है। वन, उपवन व जीवन का समान रूप से प्रकाशित होना समय की आवश्यकता और भवितव्यता है। इस भवितव्यता के साथ वनस्पतियों व औषधियों का भी भविष्य जुड़ा है। इस जुड़ाव को आने वाले समय में अधिक ज्योतिर्मय व प्रकाशित होना है। ❑

अपनों से अपनी बात

महाकाल की पुकार सुनें

वर्तमान परिस्थितियाँ कुछ इस तरह की परिस्थितियाँ हैं कि इन परिस्थितियों में मानवता एक चौराहे पर आकर खड़ी हो गई है। इस चौराहे से एक राह तो ऐसी है जो विनाश की ओर, सामूहिक आत्महत्या की ओर जाती दिखाई पड़ती है तो वहीं एक राह ऐसी भी है, जो इनसान के भीतर के देवता को जगाने का प्रयत्न करती दिखाई पड़ती है।

यदि ये कारवाँ उस ओर को बढ़ा, जिधर का पथ विनाश का है तो फिर मानवता को नष्ट होते, धरती को समाप्त होते देर नहीं लगने वाली और वस्तुस्थिति में आज जैसी परिस्थितियाँ हैं—उन परिस्थितियों में इस संभावना को मात्र एक दुःस्वप्न कहकर नकारा भी नहीं जा सकता है। आज की तिथि में भी करीब 14000 परमाणु बम धरती पर हैं।

कई देशों-प्रदेशों के मध्य बँटवारे की, अलगाव की आग-सी लगी हुई है और ऐसी परिस्थितियों में यदि किसी एक देश को एक सिरफिरा राष्ट्राध्यक्ष मिल जाए और उसकी पहुँच में परमाणु आयुधों का जखीरा हो तो सहजता से अनुमान लगाया जा सकता है कि उसका परिणाम क्या होगा? इतना समीकरण इस पूरे विश्व को एक सामूहिक श्मशान बनाने के लिए पर्याप्त है।

इस दोराहे पर एक राह इसी संभावना के लिए जाती दिखाई पड़ती है। इसी दोराहे से एक राह शुभ, मंगल एवं कल्याण की ओर को भी जाती दिखाई पड़ती है। ये राह उस ओर को जाती है, जहाँ इनसान अपनी गलतियों से सीखता है, सँभलता है, अपने अंदर के देवता को जगाता है और धरती को स्वर्ग बनाने का प्रयत्न करता है। वो राह मनुष्य में देवत्व के जागरण की है।

अनेकों अन्य व्यक्तियों की तरह से ये राहें हमारे लिए भी खुली हैं—जहाँ पर एक ओर का मार्ग तो विनाश का है, अपने जीवन को नरक बना लेने का है तो दूसरी ओर का मार्ग स्वर्गीय है—स्वयं को भगवान का लीला-सहचर बना लेने का है। इस दृष्टि से देखें तो वर्तमान समय संकट का भी है और सौभाग्य का भी है।

संकट का इसलिए; क्योंकि वर्तमान समय में परिस्थितियाँ जितनी चुनौतीपूर्ण हैं—उतनी शायद पहले कभी न रही हों और सौभाग्य का इसलिए; क्योंकि इन्हीं परिस्थितियों में ये अवसर हमारे पास आया है कि हम भगवान के साथी-सहयोगी के रूप में अपना नाम लिखा सकते हैं।

ऐसे समय रोज-रोज नहीं आते, कभी-कभी ही आते हैं। ये समय इस दृष्टि से सौभाग्य का है; क्योंकि एक दैवी संभावना का, दैवी योजना का, दैवी संकल्प का अंग बन पाने का अवसर विरलों को ही मिल पाता है। सत्य यही है कि भगवान की आवाज रोज-रोज नहीं सुनाई पड़ती है, कभी-कभी ही पड़ती है।

भगवान की आवाज को सुनने वाले कान भी भिन्न होते हैं और उनके स्वरूप को देखने वाली आँखें भी दूसरी ही होती हैं। सूरज निकलता है तो उसका प्रकाश पहले चोटियों पर गिरता है, घाटियों में तो बाद में उतरता है। उसी तरह से ईश्वर की

पुकार और भगवान महाकाल का आवाहन सुनाई उन्हीं को पड़ता है, जिनके अंत:करण इस आवाहन को सुनने के लिए तैयार होते हैं, तत्पर होते हैं।

यह एक शाश्वत सत्य है कि भगवान की पुकार सुनाई उन्हें ही पड़ती है, जो उस योग्य होते हैं, जिनकी जीवात्मा जाग्रत होती है। जो अभी सो ही रहे हैं, जिनके मन में खुद के स्वार्थ, खुद की कामनाओं, खुद की वासनाओं के अतिरिक्त शेष कुछ नहीं है—उनके लिए इस पुकार को सुन पाना संभव नहीं है।

जो पुण्यात्माएँ हैं, जिनके हृदय में भगवान के लिए भाव है, जिनके चिंतन में गुरुदेव के उद्देश्य के प्रति एक तड़प है, जिनके कर्मों में कर्त्तव्यपालन का भाव है—वे इस युगसत्य को गंभीरता के साथ जानते हैं कि अब प्रज्ञा के अवतरण का समय हो रहा है, वे जानते हैं कि अब संग्राम चरम पर है और ऐसे में तुच्छ उद्देश्यों को त्यागकर अपना सर्वस्व इसी संकल्प की पूर्ति में लगा देना है।

हर वो परिजन जो गुरुदेव की आवाज सुन सकते हैं, वे जानते हैं कि आज की इन विषम परिस्थितियों में पूज्य गुरुदेव ने उनको खींचकर बुलाया है, इस आवाहन का उद्देश्य प्रत्येक जाग्रत आत्मा की चेतना को ईश्वरीय संकल्प के साथ जोड़ देना है। वो जुड़ाव, वो मिलन ही उस संभावना का जागरण कर पाता है, जो अनेकों श्रेष्ठ आत्माओं के अंत:करण में प्रसुप्त रूप से विद्यमान होता है।

हमें इस सत्य की गंभीरता को अनुभव करने की आवश्यकता है कि वर्तमान परिस्थितियों में हम इसी उद्देश्य से बुलाए गए हैं। यह एक ऐसा समय है, जब अच्छी आत्माओं को परिस्थितियों का परिवर्तन करने के लिए बुलाया गया है, क्योंकि; ऐसा कर पाना वर्तमान परिस्थितियों में ही संभव है।

यह समय ऐसा समय है, जो लाखों वर्षों में दोबारा आने वाला नहीं है। यह समय ऐसा समय है, जिसमें युग बदल सकता है, जमाना बदल सकता है, मानवता का पुनरोत्थान हो सकता है। यह समय एक ऐसा समय है, जब मानवता का मरण भी संभव है और उसका पुनर्जीवन भी संभव है।

इसमें या तो मनुष्य जाति सदा के लिए समाप्त हो जाएगी, नष्ट हो जाएगी अथवा इनसान के भीतर के देवता को जगाना पड़ेगा। अब इन दोनों के अलावा तीसरा विकल्प संभव नहीं है।

इस अनिश्चय की स्थिति को प्रकृति अब और ज्यादा स्वीकारने के पक्ष में नहीं और इसलिए वर्तमान परिस्थितियाँ समय के प्रवाह को पहचानने की हैं और उनके अनुरूप अपने जीवन व चिंतन को बदल देने की हैं। जो इस आह्वान को सुन पाएँगे वे ही वक्त की दिशा बदल पाएँगे। ❑

एक युवक जिसके बाल अस्त-व्यस्त थे और वह कपड़े बे-ढब पहने हुआ था, सुकरात के पास पहुँचा और बोला—''मुझे अध्यात्म के विषय में जानना है, कृपया मार्गदर्शन कीजिए।'' सुकरात कुछ पल रुककर उस युवक को देखते रहे और फिर बोले—''पहला पाठ है—सफाई सीखो। नहा-धोकर आओ। बाल या तो कटवाओ और यदि रखने हों तो साफ करके, तेल डालकर कंघी से सँवारकर आओ। अध्यात्म सुसंस्कारिता को कहते हैं। पहले अस्वच्छता का प्रत्यक्ष कुसंस्कार हटाओ, तब अन्य कुसंस्कार हटाने की बात सोची जा सकेगी।''

प्राण भरा संदेशों में

दिव्य प्रखरतम प्राण भरा है, गुरुवर के उपदेशों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥
लगे हुए परमार्थ भाव में, स्वार्थ भाव अब छूट रहा।
नर-नारी मानवतावादी, जातिवाद अब टूट रहा॥
अब असुरों का अंत निकट, जो छिपे हुए सद्वेशों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥
हम संलग्न गुरु कार्यों में, हम सबका उद्धार करें।
चाहे जैसी भी बाधा हो, क्षण भर में ही पार करें॥
निकल पड़ी अब सृजन टोलियाँ, विश्व फँसा जब क्लेशों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥
हमको यदि अनुदान चाहिए, हम ऋषिवर के पूत बनें।
सद्गुरु का अनुशासन मानें, ज्ञान क्रांति के दूत बनें॥
कोटि-कोटि संकल्प उठे हैं, इन वासंती वेशों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥
युगों-युगों तक वसुंधरा पर, पुनः समय न आएगा।
स्वार्थ सुखों में जो भटकेगा, रोएगा-पछताएगा॥
गुरुवर में जो शक्ति समाहित, होगी कहाँ नरेशों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥
व्रत लें हम इस दिव्य कार्य में, साधन-समय लगा पाएँ।
भावी पीढ़ी के जीवन-पथ, स्वर्गिक सुमन सजा पाएँ॥
अभिमन्यु-ध्रुव जैसा जीवन, रहे किशोर अशेषों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥
भाग्य बड़े हैं युगों बाद, यह समय सुनहरा आया है।
भू-पर स्वर्ग सृजन हित यह प्रज्ञा अभियान चलाया है॥
गायत्री की गूँज उठ रही, देशों और विदेशों में।
मानवता को त्राण मिला है, ऋषिवर के संदेशों में॥

—चक्रेश पाण्डेय

युगव्यास वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य
के
समग्र वाङ्मय का क्रमिक परिचय

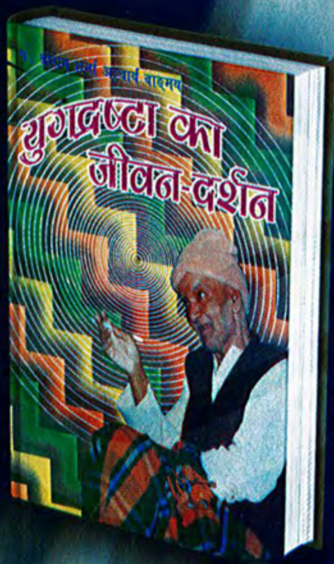

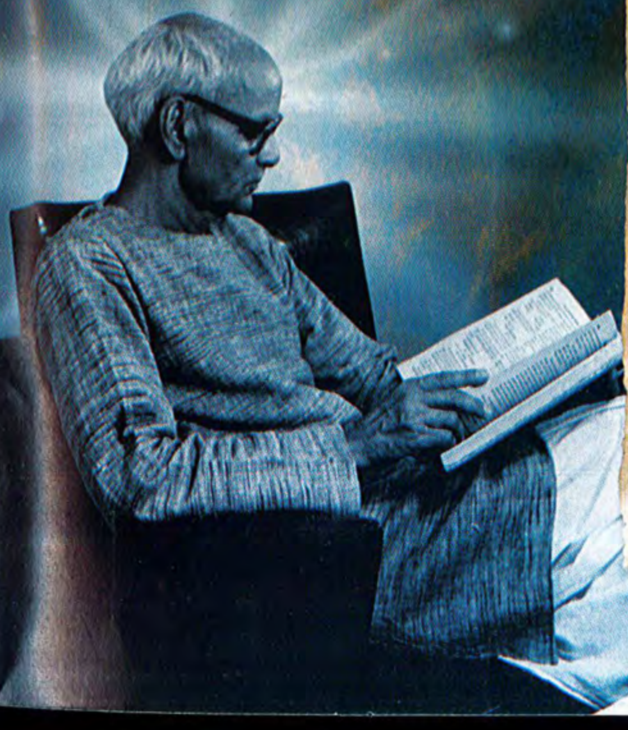

खंड–1
युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन

गायत्री परिवार के अधिष्ठाता वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने गायत्री महामंत्र की स्वयं साधना किस प्रकार की तथा किस तरह से गायत्री महामंत्र को विश्वस्तर तक प्रतिष्ठापित किया, इसके लिए आप पढ़ना चाहेंगे—

- गुरुदेव के जीवन-परिचर्य के अंतरंग पक्ष की कथा।
- गुरुदेव का अपनी गुरुसत्ता से प्रथम साक्षात्कार का वर्णन।
- साधना में अज्ञातवास का अनुभव।
- गायत्री तपोभूमि और उसका चमत्कारी प्रभाव।
- शांतिकुंज और ब्रह्मवर्चस की स्थापना का उद्देश्य।

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01 / 12 / 2024
Regd. No. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP - 08/2024-2026

मातृभूमि मंडपम और भारत माता की प्रतिमा का अनावरण देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ। यह ऐसा स्थान बन गया है जहाँ शौर्य दीवार, भारत माता और विशाल राष्ट्रीय ध्वज (तिरंगा) एक ही परिसर के अंदर विद्यमान हैं।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक–मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा–281003 से प्रकाशित। संपादक–डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 मोबाइल — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई-मेल–akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद